प्राचीन अनातोलिया की कहानी

अर्थात्

तुर्कस्थान के प्राचीन खत्ती साम्राज्य का इतिहास

डॉ. शरद हेबाळकर

अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना, नई दिल्ली-५५

श्री मोरोपंत पिंगळे स्मृति ग्रंथमाला - पाच

● **अंतरराष्ट्रीय मानक पुस्तक क्रमांक** 978-81-907895-8-5
ISBN : 978-81-907895-8-5

● **श्री मोरोपंत पिंगळे स्मृति ग्रंथमाला - पाच**

● **प्रकाशक**
अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना,
बाबासाहेब आपटे स्मृति भवन, केशवकुंज,
झण्डेवाला, देशबंधु गुप्ता मार्ग, नई दिल्ली-११००५५
दूरभाष - 011-23675667

● **टाईपसेटिंग**
आशीर्वाद कॉम्प्युटर सेंटर, मानेवाडा, नागपुर.
भ्रमणध्वनि : 8087783220

● **मुखपृष्ठ : गुंजन अग्रवाल, नई दिल्ली**

● **मुद्रक :**

● **युगाब्द :** 5115

● **सहयोग राशि रु. 60/-**

Anatoliya Ki Kahani **By Sharad Hebalkar**
(Archaeology)

प्रस्तावना

प्राचीन अनातोलिया अर्थात वर्तमान टर्की (तुर्कस्थान) का प्राचीन इतिहास यह ग्रंथ वर्तमान भारतीय इतिहास लेखन पद्धति को एक नया आयाम प्रदान करता है। इस की विशेषता यह है कि पुरातत्वीय साधनों के आधारपर ही इस इतिहास की रचना हुई है। वाङ्मयीन साधनों के अभाव के कारण केवल पुरातत्ववेत्ताओं के अथक परिश्रम स्वरूप ही यह इतिहास प्रकट हुआ।

इस ग्रंथ के लेखक डॉ. शरद हेबालकर जी 'भारतीय संस्कृति का विश्व में प्रभाव' इस विषय के विशेषज्ञ है। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' यह उनका ग्रंथ २००४ में प्रकाशित हुआ। विश्व के तीस से अधिक देशों के पुरातात्विक स्थलों का प्रत्यक्ष निरीक्षण और अध्ययन करके उन्होंने विश्व में भारतीय संस्कृति के प्रभाव का साधार विवेचन उस ग्रंथ में किया है। उसी कडी में वर्तमान तुर्कस्थान का प्राचीन इतिहास किस प्रकार भारतीय संस्कृति से जुडा हुआ था इस पर स्वतंत्र रुप से इस ग्रंथ का निर्माण उन्होंने किया है।

इतिहासकार अनातोलिया की खत्ती सभ्यता के बारे में अनभिज्ञ थे। यहाँ तक की हिरोडोटस भी इसके संदर्भ में मुर्सिली नामक नरेश के नाम के अलावा खत्ती साम्राज्य के बारे में कुछ नहीं जानता था। बाइबल में हित्ती (हत्ती या हित्ताईत) जाति का उल्लेख आता है जिससे कुछ बोध नही होता था। सीरिया एवं अनातोलिया (एशिया मायनर) में अनेक स्मार दिखाई दे रहे थे जिनका संबंध हित्ती सभ्यतासे था इसकी कल्पना तक नही थी। १८८७ में जब तेल-एल-असर्ना-पत्र प्राप्त हुए तब जाकर हित्ती शासकों के संदर्भ में कुछ सूचनाएँ प्राप्त हुई। हित्ती शासक सुप्पि लिल्युम ने मिश्री नरेश अरूणातन के राज्यारोहण पर बधाई संदेश भेजा था जो अक्कदी भाषा में और कीलाक्षर लिपि में था। फिर बोधाजकुई में कुछ अभिलेख प्रापत हुए। जर्मन विद्वान डॉ. विंकलर ने बोधाजकुई में उत्खनन कराया। वहाँ तो राजकीय अभिलेख संग्रहालय ही प्राप्त हुआ और लगभग दस हजार कीलाक्षर अभिलेख मिले। लेखक ने ठीक ही कहा है कि अनातोलिया का इतिहास पुरातत्वीय रहस्य कथा है।

लेखन ने इस इतिहास का प्रकटन चार भागों में वैज्ञानिक पद्धति से फिर भी आकर्षक भाषा में किया है। वैसे भी हर एक उत्खनन पुरातत्ववेत्ता के लिये सचमुच एक रहस्यकथा होती हे। फिर भी 'पुरातत्व' साम्राज्य वाचकों की दृष्टि से एक गंभीर और रुक्ष विषय रहा है। इस ग्रंथ से यह गलतफैमी अवश्य दूर होगी।

पाश्चात्य विद्वानों को रक्ती लोग, उनकी भाषा, उनके देवता, पूजा पद्धति, सांस्कृतिक प्रथाएँ इसमें आर्यतत्व दिखाई दिये। डॉ. हेबालकर जी ने उसका साधार विवेचन भी किया है। अगर यह सच है तो भारतीयों के पश्चिम की ओर स्थलांतरण के और प्रमाण जुटाने होंगे। हित्ती और मितन्नि सत्ताओं के बीच जो करार हुआ उसमें प्राप्त वैदिक देवताओं का उल्लेख इसी सिद्धान्त की ओर स्पष्ट निर्देश करता है। पश्चिम एशिया में मितन्नि, खत्ती, वृज्जि (फ्रिजियन) और मिडियन सत्ताएँ थी। ये सभी सत्ताएँ भारतीय संस्कृति से समानता रखती है। उनके राजाओं के प्रायः सभी नाम मूलतः संस्कृत है। फिर भी पश्चिम एशिया का इतिहास भारत के प्राचीन इतिहास का हिस्सा नही बन पाया है। उसके लिये केवल पाश्चात्य विद्वानों के श्रेष्ठता की मानसिकता का कारण बताना संयुक्तिक नही होगा। पुरातात्विक प्रमाणों के आधारपर ही इसका समाधान हो सकता है। डॉ. हेबाळकर जी का यह ग्रंथ उस दिशा में एक अच्छा प्रयास है।

इतिहास और पुरातत्व के बहुतांश साधन अंग्रेजी में होते है। बहुतसे अच्छे अध्ययनकर्ताओं के लिये भी यह समस्या बन जाती है। यह ग्रंथ हिंदी में होने का लाभ उनका प्राप्त होगा। इस दृष्टि से भी लेखक अभिनंदन के पात्र है।

खत्ती कौन थे इसपर सभी विद्वानों की सहमति नही है। इस ग्रंथ के रूप में इस संदर्भ में निश्चित प्रमाण देने का प्रयास लेखक ने किया है। हित्ती या हत्ती खत्ती थे अर्थात क्षत्रिय थे और भारत से स्थलांतरित हुए थे इस निष्कर्ष की ओर ये प्रमाण निर्देश करते है। फिर भी इस सिद्धान्त पर अधिक संशोधन की आवश्यकता हेतु इस दिशा में अध्ययन करनेवाले विद्वानों को इस ग्रंथ से प्रेरणा प्राप्त होगी।

- डॉ. अरुणचन्द्र पाठक

निदेशक, दर्शनिका विभाग, महाराष्ट्र शासन

प्राचीन अनातोलिया की कहानी

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना

चित्रसूचि - मानचित्र सूचि

प्राचीन अनातोलिया की कहानी ८

अध्याय एक - खत्ती पुरातत्व एक रहस्यकथा ११-२७

१९ वी सदी की एक पहेली-खत्ती नगर की खोज-प्रथम शोध प्रबंध-पुरातत्ववेत्ताओं के उपकरण का स्पर्श-खत्ती नगर की खोज-खत्ती लिपि, एक समस्या-रहस्यमयी खोज, कारतेपे-खत्ती नगर एवं दुर्ग-अलिशार हुयुक, गवुरकलेसी, अलका हुयुक- गणेश, मालातीय (मालती या मालत्या) काराबेल-फ्रक्तिन, कारदाघ, कार किझिल, फस्सिलर उत्तर सीरिया के खत्ती राज्य.

अध्याय दो - खत्ती राष्ट्र का इतिहास २८-६४

खत्ती राज्य संस्थापक अनित्त-प्रारंभ काल, लबर्न-खत्तीशील प्रथम-सीरिया पर आक्रमण-महान लबर्न का घोषणापत्र-मुर्शिली प्रथम-खंतिली प्रथम-तेलीपिनू, अलुवम्न, खंतिली द्वितीय, तहुरवेली, झिदन्त, हुज्जिय-मितन्नि राज्य का उदय-पश्चिम एशिया में मिश्र का प्रवेश-मुवतल्ली प्रथम, तुधलीय द्वितीय-अर्नुवन्द प्रथम-तुधलीय तृतीय-सुप्पिलुलिम प्रथम-नहरीन और सीरिया-कादेश का युद्ध-मिश्र और खत्ती राष्ट्र के संबंध- खत्ती राष्ट्र और असुरिया-अनुवन्द द्वितीय-मुर्शिली द्वितीय-मुवतल्ली द्वितीय-मुर्शिली तृतीय-खत्तीशील तृतीय-खत्ती नरेश की मिश्र यात्रा-तुधलीय चतुर्थ- अर्नुवन्द तृतीय-सुप्पिलुलिम द्वितीय.

अध्याय तीन - खत्ती धर्म ६५-८२

खत्ती कौन थे-खत्ती देवता-तेशुब (ऋतुदेव)-देवी श्वेपत-सूर्या देवी-तेलिपिनू-खत्ती मन्दिर-पुरुली का उत्सव-पौराणिक कथाएँ-ईश्वर से संवाद-संस्कार विधि.

अध्याय चार - खत्ती राष्ट्र ८३-१०१

शासन-न्याय व्यवस्था-अर्थव्यवस्था-खत्ती भाषा एवं लिपि-हरी भाषा-खत्ती साहित्य-खत्ती कला-याजिलिकया.

सूचि

चित्र सूचि

१. खत्ती नरेश और खत्ती महारानी की वृषभ पूजा
२. खत्ती नरेश द्वारा देवता को पेय समर्पण
३. देवता द्वारा खत्ती नरेश का आलिंगन
४. खत्ती नगर-सिंहद्वार
५. खत्ती प्रासाद का प्रवेशद्वार
६. खत्ती नगर - मन्दिर के परिसर में प्राप्त अनाज एवं पेय के विशाल मृद्‌भांड
७. खत्ती नगर - द्वारपाल
८. खत्ती नगर (बोधाजकुई) - दुर्गद्वार (पुनर्रचित चित्र)
९. याजिलिकया - देवताओं की यात्रा
१०. खत्ती शिल्प
११. याजिलिकया - पाषाण शिल्प
१२. खत्ती पूजा प्रतिक
१३. मातृदेवता
१४. सूर्य प्रतिक, पूजा के पात्र और उपकरण
१५. सुवर्णालंकार
१६. खत्ती योद्धा
१७. ब्राँझ की प्रतिमा, पाषाण प्रतिमा (मातृदेवता)
१८. ब्राँझ की स्त्री प्रतिमा
१९. हिरन की ब्राँझ प्रतिमा
२०. स्तंभशीर्ष पर हिरन की ब्राँझ प्रतिमा
२१. अलका हुयुक-नगरद्वार
२२. कर्केमि - सिंहासनारुढ खत्ती देता की विश्मल प्रतिमा
२३. गवुर क्लेशी (अंकारा) चट्टान पर उत्कीर्ण शिल्प
२४. तोरस में प्राप्त पाषाण शिल्प (इव्हरीज)
२५. आरवेट - शिल्प

चित्र सूचि

२६. मालतिय – आखेट शिल्प
२७. वरूण देवता–जिंजर्ली
२८. खत्ती मन्दीर (पुनर्रचित चित्र)
२९. कारतेपे – उत्खनन में प्राप्त पाषाण प्रतिमाएँ
३०. कारतेपे – संगीत और नृत्य शिल्प
३१. खड्गदेवता
३२. खत्ती नरेश मुवतल्ली की मुद्रा
३३. मुवतल्ली द्वितीय की मुद्रा
३४. मुर्शिली तृतीय की मुद्रा
३५. खत्तीशील तृतीय की मुद्रा
३६. खत्ती मुद्राएँ
३७. मुवतल्ली प्रथम का अभिलेख
३८. गणेश नगर (कुलतेपे) – बेपारी रिकार्ड
३९. खत्ती मृद्भाण्ड

मानचित्र सूचि

१. प्राचीन अनातोलिया – पुरातात्विक स्थल
२. पश्चिम एशिया तथा खत्ती साम्राज्य
३. खत्ती साम्राज्य – सुप्पिल्युलि प्रथम

प्राचीन अनातोलिया की कहानी

पश्चिमी एशिया के विशाल भूप्रदेश में वर्तमान तुर्कस्तान, इराक, सीरिया, लेबनान, इस्त्रायल और अरबस्तान ये देश आते है। पश्चिम एशिया के ईशान्य दिशा में कश्यप (कॅस्पिअन) सागर है। वायव्य दिशा में कृष्णसागर है। पश्चिम में इजिअन, भूमध्य सागर और लाल सागर है। उत्तर भाग में पर्वतीय प्रदेश है। इजिअन सागर के तटवर्ती प्रदेश से प्रारंभ होकर एशिया मायनर (अनातोलिया), आरमीनिया तथा इरान होते हुए ये पर्वतशृंखलाएँ हिंदुकुश पर्वत के द्वारा हिमालय से मिल जाती है।

अनातोलिया (वर्तमान तुर्कस्थान) एक लगभग आयताकार प्रायद्वीप है। उस का क्षेत्रफल छे लाख बाईस हजार दो सौ चौरस किलोमीटर है। उसके पूर्व में आरमीनिया का पर्वतमय प्रदेश आता है। पश्चिम एशिया के मध्यवर्ती प्रदेश में यूफ्रेट और तैग्रीस नदियों की उर्वर घाटी (मेसोपोटामिया) है। यही वर्तमान इराक है। प्राचीन सुमेरी सभ्यता के समय इस उर्वर घाटी का दक्षिणी भाग सुमेर और उत्तरी भाग अक्काद कहलाता था। इसापूर्व तीसरी सहस्त्राब्द के अंत में खम्मुराबी ने सुमेरी नगर बाबिलोन को अपनी राजधानी बनायी तबसे दक्षिणी घाटी बाबिलोनिया कहलाने लगी। कश्शु राजाओं के काल में इसी प्रदेश को कारदुनियश और खाल्दी वंशीयों के शासन काल में खाल्दिया नाम प्राप्त हुआ। सुमेर का क्षेत्रफल उस समय आज से कम था। तैग्रीस और युफ्रेट नदियाँ अलग से फारस की खाडी में गिरती थी। इन नदियों से लायी हुई मिट्टी से फारस की खाडी लगभग २५० कि.मी. दक्षिण की ओर हट गयी है। अब दोनों नदियाँ करूण के पास एकत्रित होकर एक साथ खाडी से मिलती है।

अनातोलिया के दक्षिण में सीरिया और इराक है। सीरिया मध्य सागर के तट पर है। उसके उत्तर पूर्व में सिलिशिया और उत्तर पश्चिम में लायशिया है। सिलिशिया के उत्तर में कप्पाडोशिया है। कप्पाडोशिया के उत्तर में अनातोलिया के हेली नदी की घाटी है। हेली नदी आरमीनियन पर्वत की पहाडी से निकलकर पहले दक्षिण पश्चिम दिशासे प्रवाहित होकर अर्धचंद्राकार मोड लेती हुई उत्तर की दिशा में कृष्ण सागर में विलीन होती है। इस विशाल

पूर्वाभिमुख अर्धचंद्राकार घाटी में ही साढे तीन हजार वर्ष पूर्व के ख्रत्ती महासत्ता का शक्तिशाली केंद्र था।

आरमीनिया पर्वतशृंखला की अधिकतम ऊँचाई लगभग सत्रह हजार फीट है। युफ्रेट और तैग्रीस नदियाँ जो पूर्व अनातोलिया की पर्वत से निकलती है वहाँ से ईशान्य और अग्नेय दिशा में फैली हुई पर्वत शृखलाएँ है। ईशान्य के ओर की शृंखला कृष्णसागर तक जाती है। अग्नेय की ओर जानेवाली शृंखला मध्यसागर तक जाती है। उत्तर की ओर जानेवाली शृंखला त्रेपिझोंद से सिनो तक सागर किनारे से समांतर जाती हुई इल्गास दाघ के पास कष्टमोनु से दक्षिण की ओर मुडती है। दक्षिणी ओर की शृंखला तौर कहलाती है। तौरस पर्वत से निकले हुए जलप्रवाह से सिलिशिया का सागर का तटवर्ती प्रदेश बन गया है। यह प्रदेश पहाडियाँ, नदियाँ एवं सरोवरों से समृद्ध है। ये पहाड्याँ हथेली की अंगुलियोंके समान इजियन सागरतक जाती है। उसके पार इजियन सागर में ग्रीस के प्रमुख द्वीप फैले है।अनातोलिया एशिया और युरोप की संयोग भूमि है।

पश्चिम एशिया का प्राचीन इतिहास सुमेर सभ्यता से प्रारंभ होता है। मेसोपोटामिया (वर्तमान इराक) में लगभग छे हजार वर्ष पूर्व सुमेर जाति ने सुमेर याने दक्षिण मेसोपोटामिया में नदी के घाटी के जल भरे दलदलयुक्त प्रदेश में जलनिःस्सारण करके सूखे भूमि का निर्माण करते हुए अपने उपनिवेश बनाये। सुमेर सेमेटिक नही थे। संभवतः भारत से इरान (एलाम) होकर वे मेसोपोटामिया में स्थिर हुए। इसापूर्व २८५० में सुमेर सभ्यता अपनी चरमसीमापर पहुंची। मेसोपोटामियाके उत्तर भागमें जो अक्काद कहलाता था, सेमेटिक जाति थी। कभी सेमेटिक जाति ने भी सुमेर पर शासन किया परंतु उन्होंने भी सुमेर सभ्यता को अपनाया। जब सेमेटिक वंश सुमेर पर भी शासन कर रहा था तब बाबिलोन उनकी राजधानी थी। तब सुमेर और अक्काद मिलकर बाबिलोन नामसे प्रसिद्ध हुए।

इसापूर्व १९२५ में बाबिलोन पर कश्शु जाति ने अपना प्रभुत्व स्थापित किया। कश्शु भी भारतीय (भारोपीय आर्य) थे । लगभग इसी काल में अनातोलिया के पूर्व में मितन्नि राज्य का उदय हुआ। इसा पूर्व १४५० में वह पश्चिम एशिया की प्रभावी सत्ता बन गयी। मितन्नि सत्ता स्थापित करनेवाले हरी

लोग (हुरियन्स) भी पूर्णतः भारतीय संस्कृति से प्रभावित थे। मेसोपोटामिया के उत्तर में असुर नगरराज्य थे। वे पहले बाबिलोनी सत्ता के अधीन थे। फिर मितन्नि की अधीनता में रहे। इसा पूर्व १३७५ में असुर एक स्वतंत्र प्रभावी सत्ता के रूप में उभर कर आये।

पश्चिमी एशियाके सीरिया, लेबनॉन के राज्य मिश्र के अधीन थे। पश्चिम एशिया का आंतरराष्ट्रीय युग प्रारंभ हो रहा था। इसा पूर्व चौदहवी सदी में मिश्र की महासत्ता को भी पराजित करनेवाली और एक महासत्ता अनातोलिया में उभरकर आयी। ये ख्रत्ती थे। ख्रत्ती भी भारतीय (इंडो आर्यन) थे।

लगभग तीन हजार वर्षों तक पश्चिम एशिया पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव रहा। परंतु इसा की उन्नीसवी सदी तक इतिहासकार बहुत कम जानते थे। ख्रत्ती राष्ट्र, उनकी सभ्यता, उनकी आंतरराष्ट्रीय सत्ता इसके संदर्भ में तो कुछ भी जानकारी नही थी। अंततः ख्रत्ती इतिहास प्रकट हुआ। उसकी यह कहानी।

१.
खत्ती पुरातत्त्व - एक रहस्य कथा

१९ वी सदी की एक पहेली - खत्ती सभ्यता

उन्नीसवी सदी में पश्चिम एशिया की सभी प्राचीन सभ्यताओं को विद्वान जानते थे। सुमेरि, खाल्दी, मितन्नि एवं असुर सभ्यताओं से सभी परिचित थे। मिश्र की प्राचीन सभ्यता और पश्चिम एशिया के इन सभ्यताओं के साम्राज्य इनके आंतरराष्ट्रीय संबंध थे। पुरातत्ववेत्ताओं ने पाँच हजार वर्ष पूर्व से रोमन साम्राज्य के पतन तक के साढेतीन सहस्र वर्षों के इतिहास के साक्षी स्मारक, दुर्ग, मंदीर, अभिलेख आदि प्रत्यक्ष प्रमाण प्रस्तुत किये थे। फिर भी आश्चर्य की बात यह थी की चार हजार वर्ष पूर्व की एक वैभवसंपन्न सभ्यता एवं पश्चिम एशियाकी महासत्ता जो खत्ती नाम से विद्यमान थी, इतिहासकार उसे जानते तक नही थे।

इस प्रकार की कोई सभ्यता थी इसकी जानकारी किसी को भी नही थी। होमर के काव्य में एक संदर्भ केटेयोई के लोग इस प्रकार से आता है। परंतु उनकी कोई जानकारी महाकाव्य में नही है। विख्यात प्राचीन इतिहासकार हिरोडोटस भी खत्ती सभ्यतासे और खत्ती इतिहास से परिचित नही था। लीडिया का उल्लेख करते हुए उस के पूर्व के इतिहास में कुछ राजाओं के नाम हिरोडोटस ने दिये जिसमें मुर्सिली का उल्लेख उसने किया। केवल इस नाम से विद्वानों को कुछ बोध नही होता था।

ग्रीक भी खत्ती सभ्यता के बारे में अनभिज्ञ थे। स्मर्ना जो एक तुर्की बंदरगाह है, उसके पास पाषाण में उत्कीर्ण स्मारक है। चित्रलिपि में उत्कीर्ण लेख भी उसपर थे। परंतु हिरोडोटस के समय से इस स्मारक को मिश्री नरेश सेसोस्त्रीस और नीबो परी की यात्रा के साथ जोड दिया गया था[२]। उत्कीर्ण प्रतिमाओं को ग्रीक सेसोत्रीस की प्रतिमा मानते थे। १८१२ में बर्क हर्ट नामक यात्री ने हमथ के बझार में एक घर के कोने में उत्कीर्ण शिला देखी। उसपर चित्रलिपि में कुछ लिखा हुआ था। वह मिश्र की लिपि नही थी। बर्क हर्ट ने

'ट्रॅव्हल्स इन सीरिया' इस उसकी पुस्तक में उस उत्कीर्ण शिला का उल्लेख किया था। परंतु उसकी ओर किसीका ध्यान आकर्षित नही हुआ था।

१८७० में जॉन्सन और जेसप इन दो अमरिकन यात्रीओं ने हमथ की यात्रा की। बर्कहर्ट द्वारा वर्णित उसी घर में उन्होंने पाँच उत्कीर्ण पत्थर देखे। स्थानिक लोगों के विरोध के कारण वे अभिलेखों की प्रतिलिपि नही कर सके। दो साल के बाद दमास्कस के एक मिशनरीने तुर्की राज्यपाल के साथ वहाँ जाकर अभिलेख देखे। प्रयास सफल रहा। पाशाने स्वयं आज्ञा करके उन अभिलेखों को कॉस्टँटिनोपल के संग्रहालय में भेजने की व्यवस्था की। अर्थात अब उनकी प्रतिलिपि भी उपलब्ध हुई।

१८७१ में अलेप्पो के मस्जिद में एक ऐसेही उत्कीर्ण पत्थर को देखा गया। एक दीवार में वह लगाया हुआ था। स्थानिक लोगों की श्रद्धा थी की उसपर आँखे मलने से नेत्ररोग से मुक्ती मिल जाती है। लोग उसपर आँखे रगडते थे। सभी चित्राक्षर लुप्त होकर वह पत्थर चिकना बन गया था।

इन चित्रलिपि के अभिलेखों की ओर धीरे धीरे विद्वान आकर्षित हो रहे थे। परंतु मिश्री, बाबिलोनी, असुर आदि ज्ञात लिपि से यह लिपि अलग थी। खत्ती (हत्ती या हित्ती) इस नामसे भी सब अपरिचित थे। बाइबल के पुराने करार में सीरिया और पॅलेस्टाइन की अनेक जनजातियों का उल्लेख आता है। इज्रायली जब उन के ईश्वरदत्त भूमि में आये तब उन्होंने केनाइत, केनिझाइट, कश्मोनाइत, हित्ताइत, पेरीसाइट, रीफेम, अमोराईट, कनानाईट, जिर्गाशाइट, जेबुसाइट आदि कतिपय जनजातियों को वहाँ देखा। परंतु इसमें जो 'हित्ताईत' नाम आता है वे खत्ती कभी एक सुसंस्कृत समृद्ध राष्ट्र थे इसकी कल्पना कोई नही कर सकते थे।[३] पॅलेस्टाईन के विशिष्ट क्षेत्र में हित्ताईत निवास करते थे इसका भी उल्लेख आता है। एक महत्वपूर्ण उल्लेख सालोमन के संदर्भ में है। सालोमन की पत्नियों में हित्ताइत पत्नी भी है। और एक रंजक जानकारी भी आती है। मिश्र से अश्व खरीदकर सालोमन द्वारा वे खत्ती राजा को बेंचे जाते थे। अश्वों की हिनहिनाहट और रथों की गडगडाहट सुनतेही सीरियन सेना के सैनिक एक दूसरे से कहते थे– 'भागो, इज्रायल के राजाने खत्ती और मिश्र के राजाओं को हमारे विरुद्ध किरायेपर लगाया है।'

इन संदर्भो से लगता है की खत्ती राजाओं का पॅलेस्टाईन में महत्वपूर्ण स्थान था। फिर भी खत्ती कौन थे, कहाँ के थे और क्या थे, यह एक पहेली बनी रही।

जब मिश्री अभिलेख पढे गये तब एक महत्वपूर्ण जानकारी मिली। मिश्र का अठारहवाँ राजवंश 'खेत' नामक किसी राष्ट्र को जानता था। ओरोंटे नदी के तटपर कादेश में खेत राष्ट्र के लोग उनके मिश्रराजाओं को साथ में लेकर मिश्री नरेश द्वितीय राम के साथ लडे थे। बाद में राम द्वितीय ने खेत के राजा के साथ संधि किया था। इस संदर्भ में कोरनाक के मंदीर के दीवार पर उत्कीर्ण मिश्री अभिलेख प्राप्त हुआ। इस अभिलेख में उल्लेखित खेत और बाइबल में उल्लेखित हित्ताइत एकही होंगे इसकी कल्पना तक किसीने नही की थी।

खत्ती सभ्यता पर प्रथम शोधप्रबंध

ए.एच.सायस प्रथम विद्वान था जिसने १८७६ में उपलब्ध जानकारी के आधारपर बिब्लिकल आर्किऑलॉजिकल सोसायटी में एक शोधप्रबंध प्रस्तुत किया।[४] स्मर्ना में जो अभिलेख था उस के साथ उत्कीर्ण प्रतिमाएँ थी। अन्य स्थानपर मिले हुए अभिलेखों का संबंध भी उसने खत्ती सभ्यता के साथ जोडा। अनेक विद्वानों में अब खत्ती अभिलेख, पुरातत्वीय स्थान, स्मारक, प्राचीन खत्ती नगरों के अवशेष इसके बारे में उत्सुकता निर्माण हो गयी।

१७३९ में चार्ल्स तेक्सिअर ने और १८४२ में विलिअम हॅमिल्टन ने कुछ प्राचीन नगरों के अवशेषों का वर्णन किया था। अनातोलिया अर्थात एशिया मायनर के उत्तरी भूप्रदेश में अंकारा[५] की पूर्व दिशा में लगभग दो सौ किलोमीटर पर हेली नदी के मध्य मोड पर बोघाजकुई नामक देहात के पास प्राचीन नगरी के खंडहर बिखरे पडे थे। मध्यभाग में खत्ती लिपि में उत्कीर्ण अभिलेख पडा हुआ था । बोघाजकुई के आगे अलका (अलजा) के पास हुयुक में पाषाण का प्रवेशद्वार और उस के दोनो ओर मानवमुखी सिंह (स्फिंक्स) दिखाई देते थे। इसके अलावा राजप्रासाद के प्रवेशद्वार का अवशेष, पाषाण की सिंहप्रतिमा, उत्कीर्ण अभिलेख युक्त जीर्ण पत्थर इस प्रकारके अवशेष वहाँ पर बिखरे पडे थे। प्रवेशद्वार से आगे मार्ग पर मलबों से बना हुआ विशाल टीला था जिस में प्राचीन नगरी के अवशेष होने की संभावना थी।[६] बीसवी सदी के पूर्वार्ध में

जिनका उत्खनन किया गया वे स्थान अर्थात अलिशार, अलिशार की वायव्य दिशा में २३ कि.मी. कर्केन दाघ, अस्र्लन टेपे, हेली नदी के पार कायसेरी वहाँ से उत्तर में कुलत्तेपे, ऐसे कतिपय पुरातात्विक स्थल और वहाँ के उपर दिखाई देनेवाले अवशेष इनकी चर्चा होने लगी।

१८७९-८० में सायस ने और एक शोधप्रबंध प्रस्तुत किया। उसने विश्वास के साथ प्रस्थापित किया की 'मेसोपोटामिया' के उत्तर में, उत्तर सीरिया में एवं पूरे अनातोलिया में खत्ती जातियों के समूह थे। इस क्षेत्र में दिखाई देनेवाले सभी प्राचीन स्मारक, शिल्प, अभिलेख खत्ती सभ्यता से संबंधित है।' सायस के इस सिद्धांत ने विद्वानों को सही दिशा प्राप्त हो गयी। इसके फलस्वरूप अगले बीस वर्षों में अनेक विद्वानों ने अनातोलिया के पुरातात्विक क्षेत्र की यात्रा की।[७]

पुरातत्ववेत्ताओं के उपकरण का स्पर्श

अब केवल पुरातत्त्ववेत्ताओं के उपकरण के स्पर्श की आवश्यकता थी। वह स्पर्श होते ही सभी स्मारक, शिल्प विद्वानों से संवाद करनेवाले थे। खत्ती राष्ट्र के इतिहास के साधन प्रकट होनेवाले थे। शीघ्रही वह समय आया। १८७९ में ब्रिटीश म्युझिअमने कर्केमि का उत्खनन हाथ में लिया। १८७६ में ही जॉर्ज स्मिथ ने कर्केमि का अवलोकन किया था। तुर्की और सीरिया की सीमा पर जहाँ रेलपथ युफ्रेट नदी पार करता है वहाँ उसने जेराब्लस के पास विशाल टीला देखा। उसने उसकी दैनंदिनी में लिखा 'यह एक अद्भूत पुरातत्वीय स्थल है। विशाल दीवारे और राजभवन को अपने आँचल में लेकर खडे मिट्टी के टीले..... लगभग आठ हजार फीट का वर्तुलाकार परिसर .... बिखरे पडे हुए कतिपय शिल्प, स्मारक, उत्कीर्ण स्तंभ....' स्मिथ ने उनके रेखाचित्र तैयार किये। कुछ खत्ती अभिलेखोंकी प्रतियाँ बनाई। उसी आधार पर ब्रिटीश म्युझियम के टीम ने खुदाई की। उस समय वैज्ञानिक पद्धति का अभाव था। फिर भी तीन वर्षों की खुदाई के फलस्वरूप कतिपय खत्ती शिल्प और अभिलेख ब्रिटीश म्युझिअम में पहुँच गये।[८]

१८८८ में उत्तर सीरिया में सिंजर्ली में जर्मन ओरिएंट सोसायटी ने उत्खनन किया। बाबिलोन के उत्खनन के कारण जो प्रसिद्ध थे वे रॉबर्ट कोल्डवे

उत्खनन की टीम के प्रमुख थे। इसापूर्व की दूसरी सहस्राब्दिके प्रारंभ का यह पुरास्थल था। एक टीले के नीचे दुर्ग की दीवारे प्राप्त हुई। पास मे ही नगर के अवशेष मिले। नगर के परकोटा की दीवारे ग्यारह फीट चौडी थी। असुर नरेश एसरडोन का विजय अभिलेख (६७० इसापूर्व) इस स्थानपर मिला। इजिप्त और टायर पर असुर नरेश ने विजय प्राप्त किया था इस के संदर्भ में यह अभिलेख था। इस अभिलेख के कारण सिंजर्ली नगर की पहचान निश्चित हुई।[९]

१८८७ में मिश्र में तेल अमर्ना की खुदाई में एक एक महत्वपूर्ण उपलब्धि हुई। मिश्र के धर्मसुधारक फारोआ अखेनतेन ने इस नगर का निर्माण किया हुआ था (इसापूर्व १३७४)। मिश्री शासन का अभिलेखागार यहाँ प्राप्त हुआ। अभिलेखों में मिट्टी की पटियाँ पर उत्कीर्ण अभिलेख कीलाक्षर लिपि में अक्कदी भाषा में थे। प्रमुखतः राजकीय पत्रव्यवहार था। अखेनतेन और उसका पिता अमेनोफीस तृतीय (इसापूर्व १३७०–१३४८ लगभग) इसके काल की जानकारी उसमें प्राप्त हुई। फारोआ के अधीन सीरियाई और फिलिस्तिनी राजाओं के पत्रों में खत्ती राजा और उसकी सेना के बारेमें बार बार उल्लेख आये थे। अखेनतेन के राजपद ग्रहण करनेपर खत्ती नरेश सुप्पिल्युलीमा ने लिखा हुआ अभिनंदन पर पत्र भी प्राप्त हुआ।

खत्ती नगर (खत्तुसस) की खोज

सभी विद्वानों को अब विश्वास हो गया था, की बोघाजकुई के पास खत्ती राष्ट्र का केंद्र था। वहाँ पर उत्खनन करने से ही खत्ती सभ्यता के रहस्य प्रकट होंगे। जर्मन ओरिएंट सोसायटी ने डॉ. ह्यूगो विंकलेर के नेतृत्व में १९०६ में बोधाजकुई में उत्खनन शुरू किया। प्राथमिक खुदाई में मंदिर के अवशेष प्राप्त हुए। उसके पश्चात जहाँ राजधानी का नगर होने की संभावना थी उस विशाल टीले को विंकलेर ने अपना लक्ष्य बनाया। स्थानिक देहाती उसे बुयुक्केल नाम से जानते थे। इस खुदाई में बडी सफलता प्राप्त हुई। अनेक कक्षों के भग्न अवशेष मिले जो बडी आग के भक्ष्य बने हुए दिखाई देते थे। संभवतः विविध प्रकारकी सामग्री इन कक्षों में संग्रहित की जाती थी। सबसे महत्वपूर्ण आश्चर्यजनक उपलब्धि थी अभिलेखों की। लगभग दस हजार उत्कीर्ण पटियाँ मिली। विंकलेर का अनुमान बाद में सही सिद्ध हुआ। यह खत्ती अभिलेखागार

था। ये लेख भी उसी अज्ञात भाषा में थे परंतु कुछ पटियाँ ऐसी थी जिस पर अक्कदी भाषा थी। उसमें खत्ती भूमि का उल्लेख था। इस प्रकार खत्ती राष्ट्र और उसकी राजधानी खत्ती नगर (हत्तुस या खत्तुस) इसकी अधिकृत पहचान अब हो गयी।

१९१२ तक यह खुदाई चली। विंकलेर के साथ तुर्की पुरातत्ववेत्ता मक्रीडी बे का भी इसमें सहयोग था। विशाल दुर्ग, राजप्रासाद, मंदिर, शिल्पांकित प्रवेशद्वार आदि अवशेष प्राप्त हुए।[१०] 'खत्ती' नामका उल्लेख बाइबल में होने के कारण प्रारंभ में उत्तर सीरिया में निवास करनेवाली एक दुय्यम जनजाति के रूप में केवल खत्ती सभ्यता की कल्पना की गयी थी। परंतु अब सुसंस्कृत एवं संघटित राष्ट्र के रूप में अनातोलिया की पहचान हो गयी।

खत्ती लिपि- एक समस्या

खत्ती लिपि अभी तक पढी नही गयी थी। अभिलेख अनेक स्थान से प्राप्त हो रहे थे। सायस, काडले, कॅंबेल थॉम्पसन आदि विद्वानों ने लिपि को पढने के प्रयास किये थे। द्विभाषा में एकही लेख मिला था जो चांदी की मुद्रापर था। उसके आधारपर १८८० में सायस ने एक निबंध प्रस्तुत किया था। उस मुद्रापर दस कीलाक्षर और छः चित्राक्षर थे जिससे एक से अधिक कई अर्थ निकलते थे। समकालीन असुरी लेखों में जो खत्ती विशेषनाम आये थे, उनको आधार बनाकर कुछ विद्वानों ने स्वतंत्र रूपसे प्रयास किये थे। कुछ ध्वनिचिन्ह और खत्ती भाषा का साधारण स्वरूप इसपर काफी हद तक उनकी सहमति दिखाई दे रही थी।[११] परंतु मूल समस्या कायम थी। जर्मन ओरिएंट सोसायटीने असुरी भाषा के लिपि वैज्ञानिकों को बर्लिन में, कीलाक्षरी लेखों का काम भी दिया था। सुमेरी, अक्कदी और खत्ती शब्दों की तुलना करके समान शब्द एवं अर्थ को आधार बनाने का प्रयास चल रहा था। वह भी विफल रहा।

१९१५ में रोझनी ने अपना अभिमत घोषित किया था की खत्ती भाषा की रचना भारोपीय भाषा की है। विद्वान अब द्विभाषा में उत्कीर्ण किसी ऐसे अभिलेख की प्रतीक्षा में थे जिसमें खत्ती भाषा के साथ दूसरी जानी पहचानी भाषा हो। अभिलेख पढनेकी समस्या होते भी खत्ती इतिहास की रचना करने में अच्छी सफलता मिल गयी थी। कितनेही ब्रिटीश, जर्मन, फ्रेंच, अमेरिकन, तुर्की

विद्वानों के दीर्घकाल के परिश्रम का यह फल था। प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् लगभग दस महत्वपूर्ण पुरास्थलों की खुदाई हुई थी।[१२]

रहस्यमयी खोज - कारतेपे

पुरातत्व की हर एक खोज रहस्यकथा होती है। १९४५ के शिशिर ऋतु में इस्तंबुल विश्व विद्यालय की टीम बोसर्ट और एच कॅंबेल के नेतृत्व में अदन प्रांत का सर्वेक्षण कर रही थी। तौरस की तलहाटी के पहाडी में 'कर्दिली' एक छोटा बझारवाला नगर था। जब उसका अवलोकन कर रहे थे तब वहाँ के स्थानिक अध्यापक ने, जो स्वयं कुछ ना कुछ खोज करता रहता था, उनसे कहा, 'कारतेपे नामक पहाडी है जहाँ से सेहन नदी दिखती है। वहाँ से पाँच घंटेकी घुडसवारी के मार्गपर एक पुरास्थल है जो मैंने स्वयं देखा है। वहाँ मैंने उत्कीर्ण अभिलेख युक्त एक मूर्ति भी देखी। प्राचीन काल में वहाँ मानव की बस्ती रही होगी।'

उसके कहनेपर बोसर्ट और कॅंबेल ने उस स्थान पर जाकर प्रत्यक्ष देखा। एक शिल्प का नीचला हिस्सा पडा हुआ था। दो शेरों को पकडे हुए खडे व्यक्ती का उत्कीर्ण शिल्प था। उसके पास एक प्रतिमा औंधी पडी थी जिस के पीठपर लंबा अरमाईक अभिलेख था। खत्ती नगर के अवशेषों से वह क्षेत्र भरा पडा था।

यह था कारतेपे और नदी के दूसरे तटपर था दोमुजतेपे। दोनो स्थान की खुदाई आरंभ हुई। इसापूर्व आठवी सदी का यह पुरास्थल था। पहाडीपर अड्ताइस बुर्जवाले दुर्ग के परकोटा के अवशेष प्राप्त हुए। पहाडी के उपर का दुर्ग का प्रवेशद्वार और नीचे का प्रवेशद्वार इन के बीच के ढलानपर सुरक्षा के लिये बुर्ज बनाए थे। सुरक्षा की दीवारों से सटे हुए दीर्घाओं में शिल्प उत्कीर्ण थे जो प्रथम दृष्टि में कुछ कुरूप से लगते थे। परंतु समकालीन जीवन के प्रसंग वहाँ पर उत्कीर्ण थे। मिश्र एवं मेसोपोटामिया की कला का प्रभाव प्रकट होता था। संगीत के कलाकारों की पंक्तियाँ, अनेक प्रकार के खेल में मग्न जनसमूह, धार्मिक कर्म करते हुए लोग, सागरी युद्ध में डुबते हुए नौसैनिक इस प्रकारके दृश्य उस में थे।

सिलिसिया के मैदानी प्रदेश की ओर जानेवाली पहाडियाँ वेगवान् सेहत नदी की घाटी के जंगलों से घिरी हुई थी। उसमें ही निसर्गसुंदर कारतेपे नगर वसा हुआ था। लगभग २७०० वर्ष पूर्व जब नगर का विनाश हुआ तब से

यह स्थान मानो अदृश्य सा हो गया। सैंकडों वर्षों से केवल गडरिये और लकडी का कोयला ढूंढनेवाले गिने चुने लोग वहाँ जाते रहे। जंगली सुवरों का विचरण और तीतर जैसे पंछीओंकी कर्कश आवाज उस पहाडी और जंगल की पहचान बन गयी थी। अतीत में, ऐतिहासिक स्मृति के क्षितीज के पार किसी राजाने यहाँ राजधानी वसायी होगी, दुर्ग और प्रासाद का निर्माण किया होगा इसकी कल्पना करना भी संभव नही था।

पुरातत्ववेत्ताओं के लिये यहाँ एक रोमाञ्चकारी खोज प्रकट हुई। परकोटा के प्रवेशद्वारपर आतेही उसके दाहिने बाजूपर खत्ती लिपि में अभिलेख था। और प्रवेशद्वार के बाएँ बाजूमें उसी लेख का अनुवार फिनिशिअन भाषा में प्रकट हो रहा था। लगभग पचहत्तर वर्षों से इस प्रकार के द्विभाषी अभिलेख की प्रतीक्षा में विद्वान थे। इसी कारण यह एक अद्भूत उपलब्धि थी। वैसे भी खत्ती अभिलेखों का अध्ययन काफी प्रगत हो गया था। फिर भी यह द्विभाषी लेख महत्वपूर्ण था।[१३]

अभिलेख में 'असितवद' राजा का नाम आता है। यह खत्ती नाम है। उसने दुर्ग का निर्माण किया और उसे अपना नाम दिया। यह अभिलेख इसापूर्व आठवी सदी के उत्तरार्ध का है।[१४] रत्ती साम्राज्य तो बहुत पहले नष्ट हो गया थां परंतु छोटे छोटे खत्ती राज्य अनेक स्थान पर फैले हुए थे जहाँ प्राचीन खत्ती राजवंश से संबंधित राजपुत्र पुरानी खत्ती परम्परा का पालन करते हुए शासन करते थे। असितवद सिलिसिया नरेश अवरिकस के स्वाधीन था।

खत्ती इतिहास के रचना की प्रमुख बाधाएँ अब दूर हो गयी थी। पुरास्थलों की खुदाई ने प्रामाणिक ऐतिहासिक साधन उजागर कर दिये थे। १९३५ में तुर्की हिस्टॉरिकल सोसायटी ने कोसय और अरिक के नेतृत्व में हुयुक के पास अलका नगरी के पुरास्थल की फिरसे खुदाई की। इस बार राजवंशियों की और धर्मगुरुओं की समाधियाँ प्राप्त हुई। धार्मिक प्रथा से युक्त किये अंतिम संस्कार के प्रमाण यहाँ पर प्राप्त हुए। शव के साथ रखे हुए राजा के हथियार, सूर्यगोल की प्रतिमाएँ, देवताओं के पवित्र प्राणियों के प्रतिक, प्रसाद के पात्र और अर्चना के उपकरण और कतिपय समर्पित बहुमुल्य वस्तुएँ खुदाई में मिली। प्रायः सुवर्ण और चांदी की वस्तुएँ थी। पुरातत्वविदों ने इन साधनों को इसापूर्व तीसरे सहस्रक के बीच में निश्चित किया। अलका हुयुक खत्ती नगर से केवल २०

किलोमीटर की दूरीपर था। महत्वपूर्ण शासकीय केंद्र था। नये नये साधन और भी मिल रहे थे। १९३१ में बोघाज कुई में भी फिरसे उत्खनन हाथ में लिया गया। जर्मन आर्किऑलॉजिकल सोसायटी, इस्तंबुल के निदेशक के बिट्टल ने लगातार आठ वर्ष खुदाई की । कई खत्ती भवन के अवशेष प्राप्त हुए। खत्ती मंदिर तो इसके पहलेही मिले थे। अब की उत्खनन के फलस्वरूप खत्ती धर्म का सबसे पवित्र और महत्वपूर्ण यात्रा स्थान खत्तीनगर के पास याजिलिकया के परिसर में प्राप्त हुआ।

खत्तीनगर एवं दुर्ग

खत्ती नगर (खत्तुश) तीन हजार फीट की उंचाई पर था। यह एक समृद्ध उर्वर घाटी थी। नगर की सुरक्षा के लिये वहाँ की पहाड्यिों का कुशलता से उपयोग किया गया था। पुरास्थल पर इस नगर को घिरी हुई सात कि.मी. लंबी दीवार के अवशेष ध्यान में आये। सबसे पुराना नगर छोटा था। केवल ३५० मीटर (११६० फीट) लंबाई थी। यह पहाडी के ढलान पर था। इसापूर्व तीसरे सहस्रक की बस्ती के अवशेष वहाँ पर मिले। बोघाझकुई देहात इस पहाडी के नीचे है। पहाडी पर समतल भूमि है जिसे बुयुक्केल कहा जाता है। खंतिली प्रथमने लगभग १५०० इसापूर्व में यही पर अपनी राजधानी बनायी थी। नगर के मध्य में मंदिर के अवशेष प्राप्त हुए। संभवतः सुप्पिल्युलिम के काल में राजधानी का विस्तार करने की आवश्यकता लगी। खत्ती राज्य साम्राज्य में परिवर्तित हो गया था। आर्थिक समृद्धि बढ गयी थी। पहाडी के दक्षिण में बालचंद्राकार परकोटा बनाया गया। मूल छोटा परकोटा उपर था ही। विस्तारित क्षेत्र में चार मंदिरों के अवशेष प्राप्त हुए। पहाडी पर अनेक एकल चट्टानों पर भवन बनवाए गये थे जिन के अवशेष उन की सूचना देते है। अन्य स्थानोंपर निवासी भवन बनवाए गये थे इस की ओर भी प्राप्त अवशेष संकेत करते है।

सुरक्षा की दृष्टी से विस्तारित नगर की कीलाबंदी की थी। उस के अवशेष देखकर लगता है की नगर का क्षेत्र ३०० एकर से अधिक था। दुर्ग स्थापत्य देखकर आश्चर्य लगता है। दक्षिण की ओर में उन के विकसित दुर्गस्थापत्य का विशेष रूप दिखाई देता है। पहाडी की ढलान पर अनेक स्थानपर घडाई किये हुए विशाल पत्थरों को मजबुती से लगाकर प्राकार की

चौडी दीवार का अधिष्ठान बनाया था। दीवारे दोहरी थी। उन के बीच में ईंट पत्थर की रोडी डालकर उन को मजबुत बनाया था। पूरा स्थापत्य विशाल पाषाण खंडों का है जो केवल एक दूसरे पर रखते हुए आश्चर्यजनक पद्धति से एकसंघ दीवार के रूप में उभरते है। पूरे स्थापत्य में कही भी मिट्टी या चुने का उपयोग नही दिखता।[२५] इसी दक्षिण की ओर पाँच प्रवेशद्वार थे। प्रवेशद्वार के दोनो ओर चौकोर बुर्ज और बीच में कमान के आकार का मुख्यद्वार था। द्वारपर सुंदर शिल्प बने थे। एक महाद्वार पर योद्धा द्वाररक्षक की प्रतिमा थी। दूसरे एक द्वारपर मानवमुखी सिंह की प्रतिमा थी। एक सिंहद्वार था, अर्थात उस पर सिंह की प्रतिमा उत्कीर्ण थी। मानवाकृति सिंह की प्रतिमा का द्वार जहाँ पर है वहाँ दोनो ओर पाषाण की सीढीयाँ बनायी थी। इस प्रवेशद्वार की दीवार में एक छुपा हुआ छोटा द्वार था। चट्टान में सुरंग बनाकर छुपा मार्ग तैयार किया था। परकोटा के बाहरी ओर उससे सटा हुआ प्रदक्षिणा मार्ग था उस के भी नीचे पहाडी में उस सुरंग का मुँह खुलता था। अर्थात युद्ध काल में आपात्कालीन स्थिति में उस रहस्यमय मार्ग का उपयोग करते होंगे।

अलिशार हुयुक, गवुरकलेसी, अलका हुयुक

पुरातत्वीय साधनों का अभाव अब दूर हो गया था। कतिपय पुरास्थल अब खत्ती राष्ट्र का राजनैतिक इतिहास, खत्तीओं का सामाजिक संघटन, उन के धार्मिक स्थान और मंदिर एवं धार्मिक प्रथाएँ,खत्ती शासन पद्धति,खत्ती लष्करी प्रशासन और युद्धनीति और खत्ती स्थापत्य एवं कला इन सारे पहलूओंपर प्रकाश डाल रहे थे।

बोधाजकुई के पास में अनेक पुरास्थल प्राप्त हुए थे, जिससे हेली नदी का परिसर खत्ती राज्य का हृदय प्रदेश सिद्ध हुआ। बोघाझ कुई की अग्नेय दिशा में लगभग ८० कि.मी. पर एक टीला अलिशार हुयुक नामसे परिचित था। उत्खनन में द्वितीय स्तर में मिली उत्कीर्ण पटियों पर सबसे प्राचीन लिखित खत्ती रिकार्ड था। जिसे कप्पा डोसियन टॅब्लेट कहा गया उसपर 'अनित्त–राजकुमार' ये शब्द थे।[२६] तीसरे स्तर में सुंदर मृद्भांड प्राप्त हुए जिसमें दो हत्थेवाली सुराही, घडे, विविध आकार के रंगीन कलात्मक पात्र, छोटे बडे चमच थे। समृद्धि के देवता की शिसे की मूर्ति तथा मुकुटधारी योद्धा की प्रतिमा मिली।

मुद्राओं में जिसपर पक्षी मुखी मनुष्यों का समूह, बली चढाने का प्रसंग इस प्रकार के चित्र थे ऐसी मुद्राएँ प्राप्त हुई। ताम्र और ब्राँझ के कंकण एवं अलंकार तथा कुल्हाडी, कोयता हँसिया आदि वस्तुएँ मिली।

आलिशार हुयुक के पास गवुर कलेसी की पहाडीपर खत्ती धर्मस्थल था। पहाडी पर एक चट्टान को काटकर चबुतरा बनाया गया था। उस के सामने की बाजू पर देवताओं का शिल्प था। दो खत्ती देवता आसनस्थ देवी की ओर चलते जा रहे है इस प्रकारका दृश्य उत्कीर्णित किया हुआ था। खत्ती राज्य लुप्त होने के पश्चात यह परिसर निर्जन हुआ था। वृज्जिओं के काल में एक वृज्जि सरदार ने पहाडी के उपर गढी बनाई। उसके प्राकार के प्रवेशद्वार की कमान चबुतरे पर बनाई जिसके खण्डहर आज दिखाई देते है।

बोघाजकुई से लगभग ४० किलोमीटर की दूरीपर खत्ती राज्य का एक महत्वपूर्ण शासकीय केंद्र था। अलका (Alaja) नामक एक व्यापारी नगर के पास यह टीला था जिसके खंडहरों का अनेक यात्रिओं ने वर्णन किया था। यहाँ उत्खनन में दो विशाल मनुष्यमुखी सिंह की पाषाण की प्रतिमाएँ तथा अनेक शिल्पांकित पाषाणखण्ड मिले। इन प्राप्त अवशेषों को रिकार्ड करके १९३५ में तुर्की आर्किऑलॉजिकल सोसायटीने फिरसे उत्खनन किया। खत्ती काल की दीवारों को हटाया गया। उस के नीचे राख एवं जले हुए मलबे का स्तर था। उस के भी बीस फूट नीचे ताम्रयुगीन तीन समाधियाँ प्राप्त हुई। बाद में और दस समाधियाँ मिली।

अलका हुयुक समृद्ध नगर था। व्यापारी केंद्र था। राजधानी के पास होने के कारण वह महत्वपूर्ण शासकीय केंद्र भी रहा होगा।

गणेश, मालतीला काराबेल

आलिशार के दक्षिण में कुलतेपे टीले का उत्खनन १९४८ में तुर्की आर्किऑलॉजिकल सोसायटी के दिया। यह पुरास्थल गणेश (या कणेश) नाम से परिचित है। इसापूर्व १९०० के अवशेष प्राप्त हुए । यह एक असुरी व्यापारी नगरबस्ती थी। खत्ती उस समय एक राष्ट्र के रूप में नही उभरे थे परंतु अनेक खत्ती नगर राज्य संपन्न हो रहे थे। असुर बेपारीयों का उनसे संबंध था। खुदाई में विविध प्रकारके मृद्भांड, ताम्रपात्र, अलंकार, मुद्राएँ मिली। मातृदेवता की

प्रतिमा एवं अन्य सभी वस्तुएँ खत्ती सभ्यतासे संबंधित है। गणेश (कुलतेपे) की खुदाई से खत्ती नगर एवं असुर बस्तीयाँ इन के बीच चार हजार वर्ष पूर्व जो व्यापार चलता था उस की जानकारी मिली। व्यापार के कारोबार का पत्रव्यवहार खुदाई में प्राप्त हुआ। उससे पता चलता है की व्यापार निगम को कारूम कहा जाता था। व्यापार के लेन देन पर इसी संघटन का नियंत्रण था। माल ले जानेवाले कारवाँ, उन की सुरक्षा, विनिमय व्यवस्था इसका दायित्व कारूम पर था। वस्तुओं का मूल्य निश्चित करना तथा व्यापारियों की आर्थिक समस्याओं को सुलझाना यह भी कारूम की जिम्मेदारी थी। खत्ती नगरों में उनकी अपनी इस प्रकार की संस्थाएँ थी।

खत्ती राष्ट्र का केंद्र बिंदु हेली नदी के तटपर खत्ती नगर में था। लगभग सौ-डेढ सौ किलोमीटर की त्रिज्या वाला विस्तीर्ण प्रदेश पर्वतशृंखला से घेरा हुआ था। खत्ती के अर्थात अनातोलिया के महत्वपूर्ण उत्खननित पुरास्थल जैसे बोधाजकुई के पूर्व में गवुर कलेसी, अलका हुयुक, दक्षिण में आलिशार कुलतेपे, कारहुयुक, मालाती इसी क्षेत्र में है। मालाती नगर के पास का टीला अर्स्लन टेपे जहाँ १९२६ एवं १९३२ में उत्खनन हुआ था यह भी महत्वपूर्ण संपन्न नगर था। प्राकार से युक्त था। चार प्रवेशद्वार थे। एक प्रवेशद्वार पर दोनो ओर सिंह की अखंड पाषाण से बनाई हुई प्रतिमाएँ थी। सिंहद्वार के कक्ष में राजा की विशाल प्रतिमा प्राप्त हुई।[२७] वह चूने के पत्थर की थी सिंह प्रतिमा के उपर दीवार पर लघु आकार में खत्ती पौराणिक प्रसंग तथा देवता उत्कीर्णित है। उस में देवता का महासर्प के साथ युद्ध प्रसंग भी है। मालाती उसी नाम के प्रांत की राजधानी थी। खत्ती राज्य के विनाश के बाद भी वहाँ खत्ती वंश का राज्य था।[२८]

खत्ती साम्राज्य पश्चिम में इजिअन सागर तक फैला हुआ था। प्राचीन द्वार के दक्षिण में इझमीर के पूर्व में काराबेलकी घाटी से पहाडी मार्ग जाता है। इस मार्गपर मार्ग से सटे हुए पहाडी में ६० फूट उँचे चट्टानपर आयताकृति आकार का प्रकोष्ट खुदा हुआ है। उस में नौ फीट उँची खत्ती नरेश की प्रतिमा उत्कीर्णित है। पाव में अंगुठे की ओर वक्र पादत्राण (बूट) है। सिरपर सिंगवाला मुकुट है। दाहिने हाथ में धनुष्य और बाये हाथ में शूल है। कमर में खड्ग लटका हुआ है। वहाँ पर जो अभिलेख है वह अस्पष्ट है। कुछ विद्वान उसे खत्ती नरेश महाराजा तुधलीय की प्रतिमा मानते है तो कुछ विद्वानों की राय से वह धार्मिक

स्मारक है। कुछ विद्वानों का मत है की वह अझ्झुवा के स्थानिक शासक ने उत्कीर्ण कराया होगा। परंतु यह खत्ती स्मारक है इस में संदेह नहीं। इजिअन सागर के इसी तटवर्ती क्षेत्र में कारोबेल के पास सिपायलोस पर्वत की उपत्यका में उँचे चट्टानपर ३० फूट उँची स्त्री प्रतिमा है। उस की दृष्टि केस्तर नदी के जल से सिंचित हरे भरे पठार की ओर है। संभवतः यह मातृदेवता है।

फ्रक्तिन, कार दाघ, कार किझिल, फस्सिलर

खत्तीयों के मूल प्रदेश (हेली नदी की घाटी) के दक्षिण में कप्पादोसिया और उस के दक्षिण में सिलिसिया आता है। सिलिसिया मध्यसागर के तट पर है। अंति तोरस पर्वत से निकलकर सेहन नदी सिलिसिया में मध्यसागर में विलीन होती है। सेहन नदी की घाटीयाँ अर्थात कप्पादोसिया और सिलिसिया में है। कप्पादोसिया में फ्रक्तिन नामक स्थान है। यहाँ चट्टान पर शिल्प पट्ट दिखाई देते है। खत्ती नरेश और उसकी महारानी पुदुखिपा देवता के सम्मुख वेदिका के पास खडे होकर अपना श्रद्धाभाव अर्पित करते हुए दिखाई देते है। यह किझुवत्न राज्य का देवता 'एस' (ईश) है। सिलिसिया में भी इसी प्रकार का धार्मिक स्थल है। सेहन नदी के किनारे की पहाडी के चट्टानपर इसी प्रकार के शिल्प है। एक शिल्प में मुर्सिली द्वितीय का पुत्र खत्ती नरेश मुवतल्ली देवता के सामने खडे हुए समर्पण करते हुए दिखाया है।

करमान जिले में कार दाघ पर्वत की उपत्यका में गुंफा मंदिर के समान चट्टान काट कर बनाये हुए शिल्प है। कारदाघ भी धार्मिक यात्रा का स्थान रहा होगा। यहाँ के अभिलेख अस्पष्ट हो गये है। पास में बिखरे हुए खण्डहर सूचित करते है की नौवी शती में उसी स्थानपर चर्च बनाया गया था। इसी क्षेत्र में किझिल दाघ की पहाडीपर और एक धार्मिक केंद्र था। चट्टान को काटकर उसे विशाल सिंहासन (पीठ) बनाया था। सिंहासन तो खाली था। संभवतः वह देवता का पीठ (जहाँ मूर्ति नही होती, केवल पवित्र आसन होता है।) रहा होगा। उस के पीछे के चट्टान पर जो शिल्प है उस में एक आसनस्थ राजा को दिखाया है। परंतु अभिलेख अस्पष्ट है।

कारदाघ और कार किझिल में अभिलेख पर केवल 'महान राजा, मुर्सिली का पुत्र' इतना ही उल्लेख है।

कार दाघ के पूर्वी दिशा में फस्सिलर (Fassiler) गाँव के पास चार मीटर उंची विशाल मूर्ति प्राप्त हुई थी। इस देवता के सिरपर मुकुट है। एक हाथ वरद हस्त जैसा कंधे से उपर उठाया हुआ हे। दूसरा सामने है। पाँव में नीचे एक मूर्ति है जो पर्वत का प्रतिक है। देवता के दोनो ओर सिंह की प्रतिमाएँ थी। याजिलिकया के प्रसिद्ध धर्मस्थल पर शिल्पों के मध्य समूह में इस प्रकार का देवता का शिल्प है। फस्सिलियर में जहाँ ये मूर्ति प्राप्त हुई वहाँ से छः किलोमीटर की दूरी पर खत्ती बस्ती के अवशेष मिले। वहाँ के मंदिर में यह मूर्ति होगी। अनातोलिया में कई स्थानपर प्राप्त इस प्रकार के खत्ती स्मारक उनके साम्राज्य के विस्तार को और प्रतिष्ठा को सूचित करते है।

हरी और मितन्नि खत्ती राष्ट्र के पडोसी राष्ट्र थे। हरी कुर्दिस्तान में थे जहाँ से उत्तरी मेसोपोटामियातक उन के राज्य का विस्तार था। हरी राज्य के पूर्व में मितन्नि थे। हरी और मितन्नि दोनों की सभ्यताओंपर भारतीय संस्कृति का प्रभाव था।[१९]

इन राज्यों के प्रदेश खत्तीओं के साम्राज्य काल में खत्ती राष्ट्र का हिस्सा बन गये थे। खत्ती साम्राज्य का और एक महत्वपूर्ण विस्तार का क्षेत्र था सीरिया।

उत्तर सिरिया के खत्ती राज्य

बाईबल में खत्तीयों के संदर्भ है। विद्वानों के लिये यह भी एक पहेली थी। यहाँ तक, की सीरिया में ही खत्तीयों का मूल प्रदेश होगा ऐसा लगता था। प्रथम पुरातत्वीय खोज सीरिया से प्रारंभ होगी यही अनुमान भी था। १८१२ में प्रथम खत्ती अभिलेख अलेप्पो (हमथ) में ही मिला था। उसी से खत्ती इतिहास की खोज प्रारंभ हुई। खत्तीशील प्रथम ने अलेप्पो को जीता था। वह यम्हद राज्य की राजधानी थी। उत्तर सीरियामें दूसरा छोटा राज्य था अललख (अट्खना)। सर एल् वुली ने वहाँ उत्खनन किया। खत्ती अभिलेख एवं स्मारक वहाँ मिले।

खत्ती राज्य के दक्षिण में युफ्रेट नदी के किनारे कर्केमिं एक नगर राज्य था। सीरिया में प्रवेश का मार्ग युफ्रेट पार करके कर्केमि से जाता था। १९११ में ब्रिटिश म्युझिअम ने वहाँ पर उत्खनन किया। सुरक्षा तट से युक्त नगरी के

अवशेष प्राप्त हुए। खत्ती अभिलेख मिले। कर्केमि के अवशेष खत्ती कला एवं समृद्धि की साक्ष देते है।

विश्व के पटल पर आज तुर्कस्तान नामक राष्ट्र विद्यमान है। कभी उसे अनातोलिया या एशिया मायनर कहते थे। अतीत में चार हजार वर्ष पूर्व उस का कोई नाम नही था। खत्ती सभ्यता का उदय हुआ। देखते देखते ईजिप्त और बाबिलोन जैसे उस समय की सभ्यताओं के सामने खत्ती सभ्यता ने आव्हान खडा किया। खत्ती राष्ट्र पश्चिम एशिया की एक प्रभावी महासत्ता बन गयी।

पुरातत्व ने इस इतिहास को प्रकट दिया।

संदर्भ

१. स्मर्ना (Smyrna) का प्राचीन नाम इजमीर (Izmir) था।

२. गुर्ने ओ.आर. 'द हिट्टाइट्स' पेलिकन बुक्स – रिव्हाइज्ड एडिशन–१९६२, पृ.४

३. जेनिसिस XV–१९–२१ 'दक्षिण में अमलेक निवास करते है और हित्ताइत, जेबुसाइट और अमोराइट पहाडों में रहते है। कनानाईट सागर के पास और जॉर्डन के बाजू में रहते है।' जेनिसिस XIII–२९

४. गुर्ने ओ.आर. पृ. ४

५. अंकारा वर्तमान तुर्कस्थान की राजधानी है। इसा पूर्व ७०० में वृज्जि (फ्रिजिअन) नरेश मिडास ने इसका निर्माण किया । इस्तंबुल को डेर–ई–सीदेत (शुभ–प्रवेशद्वार) कहते थे। बिझांटिअस काल में (७०० इसा पूर्व) थिओडोसिस द्वितीय ने वहाँ दुर्ग का निर्माण किया था। केमाल पाशा ने शासन की सुविधा की दृष्टि से राजधानी इस्तंबुल से अंकारा में स्थलांतरित की।

६. श्मित एरिक – अनातोलिया थ्रू द एजेस, डिस्कव्हरीज ॲट द अलिशार माउंड शिकागो–पृष्ठ २१

७. इसमें प्रमुखतः जो विद्वान थे उसमें हमंन और पुश्तेन १८८२–८३, रामसे और होगर्थ १८९०, चांत्रे १८९३, होगर्थ और हेडलाम १८९४, अंडरसन और क्रोफूट १९००, इनका समावेश था।

८. लॉइड सेटन – अर्ली अनातोलिया, पेलिकन बुक्स १९५६ पृ.२०

९. लॉईड सेटन – पृष्ठ २२

१०. लॉईड सेटन पृ. २३–२४

११. जिन्होने स्वतंत्र रूप से प्रयास किया उस में प्रमुख विद्वान थे, बोसर्ट (जर्मन), फोरर (स्विस), गेल्ब (अमेरिकन),रोझनी (झेक) और मेरिग्गि (इतालियन)

१२. इसमें प्रमुख स्थल थे, अलिशार (शिकागो वि.वि.१९२७), अलका हुयुक (हमिट कोसे–विंकलर १९०६, मॅक्रिडी १९०७, हिस्टॉरिकल सोसायटी १९३५, १९३७,१९३९), बोघाजकुई–याजिलिकया (जर्मन आर्किऑलॉलिकल इन्स्टिट्यूट इस्तंबुल १९३१), अर्स्लन टेपे (शिकागो एक्स्पिडीशन १९२६), मालाती (फ्रेंच इन्स्टिट्यूट इस्तंबूल १९३२), कूलतेपे–गणेश (झेक एक्स्पिडीशन १९२६, टर्किश हिस्टॉरिकल सोसायटी १९४८), युमुक टेपे–मार्सिन (जॉन गर्स्टंग), तौरस–सिलीशिया (गोल्डमन १९३५–१९४९)

१३. लॉईड सेटन – पृ. १७७–१७९

उस समय सभी विद्वानों की दृष्टि से खत्ती भाषा की समस्या सुलझानेके लिये कारटेपे में प्राप्त यह द्विभाषी अभिलेख रोझेटा अभिलेख जैसा महत्वपूर्ण था। आय जे गेल्ब का मत इसके प्रतिकुल

था। उसकी दृष्टि से १९३० से १९३५ के काल में ही ख़त्ती चित्रलिपि का वाचन करने में सफलता मिली थी।

१४. आसिदवद जिस के अधीन था वह सिलिशिया नरेश अवदिकस असुर नरेश तिग्लथपिलेसर के समकालीन था। इसापूर्व ७३८ के असुर लेख में उसका उल्लेख आता है।

१५. लॉइड सेटन – पृ.१३०

१६. श्मित एरिक–अनातोलिया थ्रू द एजेस पृ. ६९

१७. यह राजा की प्रतिमा अब अंकारा में पुरातत्व संग्रहालय के प्रवेशद्वार के पास रखी है।

१८. असुर नरेश तिग्लथ पिलेसर ने इसापूर्व १११० में आक्रमण किया तब ख़त्ती राज्यों के संघ का नेतृत्व मिलिद (मालाती) राज्य ने किया था।

१९. मितन्नि एवं हरी (हुरियन) देवता, धार्मिक प्रथाएँ एवं भाषा पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव था। मितन्नि और ख़त्ती इन के बीच अर्थात मितन्नि नरेश मत्तिवज और ख़त्ती नरेश सुप्पिल्युलिम में जब संधि पत्र बना उस में वैदिक देवताओं की शपथ ली है। मित्र, वरुण, इन्द्र तथा नासत्य इन देवताओं को साक्ष के रूप में प्रस्तुत किया है।

२.
प्राचीन अनातोलिया - ख़त्ती राष्ट्र का इतिहास

३९०० वर्ष पूर्व वर्तमान तुर्कस्थान के मध्य में हेली नदी की घाटी में लगभग दस उपनिवेश थे। यही उपनिवेश नगर राज्य में परिवर्तित हो गये। ९०० किलोमीटर लंबी हेली नदी आरमीनिया के पहाडी प्रदेश से निकलकर अर्ध अण्डाकृति मार्ग से कृष्णसागर में विलीन होती है। हेली नदी का दूसरा नाम है किझिल इर्मक। इस नदी की घाटी में उर्वर पहाडियाँ थी। घाटीयों का प्रदेश समृद्ध था।

उस समय इस भूप्रदेश का कोई विशेष नाम नही था। स्थानिक जनजातियाँ थी। उस में ख़त्ती प्रभावी थे। उन्होंने लगभग १७०० इसापूर्व के प्रारंभ में ख़त्ती राष्ट्र का निर्माण किया। ख्रिस्ताब्द पाचवी सदी में पाश्चात्य इस भूमि को एशिया मायनर कहते थे। तुर्की इसे अनादोलू नामसे पहचानते थे। बिझांटाईन लेखकोने इस भूमि को अनातोलिया कहा। ख़त्ती शासन वर्तमान तुर्कस्थान अर्थात पूरे अनातोलिया पर था। इस प्रकार अनातोलिया का प्राचीन इतिहास ख़त्ती राष्ट्र के इतिहास से प्रारंभ होता है। हेली नदी की घाटी का प्रदेश ख़त्ती शासन का हृदयस्थल था। ख़त्तीओं के जो प्रारंभिक राज्य थे उस में एक प्रभावी राज्य कुश्शर में था। और भी प्रभावशाली राज्य थे जिस में नेसा, झल्पुवा, पुरूषखण्ड, शालातिवर, ख़त्ती आदि राज्य थे। इन राज्यों के शासकों में सत्ता के लिये संघर्ष होते थे। अनेक शासक स्वयं को राजा, महाराजा कहलाते थे।

ख़त्ती राज्य का संस्थापक-अनित्त

कुश्शर में 'पित्खन' नाम का ख़त्ती शासक था।[१] उसने कुश्शर की सेना सुसज्जित की। पित्खन के संदर्भ में कुछ जानकारी मिलती नही है। परंतु उसका पुत्र अनित्त महत्वाकांक्षी था। वह स्वयं पराक्रमी एवं कुशल सेनानी था। पुरूषखण्ड का राज्य शक्तिशाली था और उसका शासक स्वयं को महाराजा

कहलाता था। अनित्त ने उसपर आक्रमण किया। उसकी शक्ति तोड दी। पुरुषखण्ड पर विजय प्राप्त करते ही उसकी सेना में भी जोश आया। देखते देखते नेसा, झल्पुवा, शालातिवर और खत्ती इन राज्योंपर अनित्त की सेनाने कब्जा कर लिया। संभवतः विजित राज्यों का क्षेत्र दूर तक फैला हुआ था। कुश्शार से यह क्षेत्र दूर था। अनित्त ने नेसा में शासन का केंद्र बनाया। नेसा एक समृद्ध व्यापारी नगर था।[२] असुर व्यापारीयों की बस्ती वहाँ पर थी। कप्पाडोशिया के विशाल क्षेत्र पर नियंत्रण रखने की दृष्टि से भी नेसा का स्थान उपयुक्त था। दैनंदिन व्यवहार के लिये नेसा के निवासी तथा व्यापारी बाबिलोनिया के क्युनिफॉर्म लिपि का उपयोग करते थे। मिट्टी की पटियाँ पर लिखापढी होती थी।[३]

अनित्त ने नेसा को राजधानी बनाने के कारण खत्ती राष्ट्र का प्रारंभिक अवस्थामें ही आंतरराष्ट्रीय व्यापार में प्रवेश हो गया। असुरिया और अनातोलिया के नगरों के बीच चलनेवाले व्यापार पर नियंत्रण करना आसान हो गया। मेसोडोनिया के साथ भी व्यापारी संबंध प्रस्थापित हुए। व्यापार पर नियंत्रण रखने के लिये व्यापारी निगम थे। उसे कारूम कहते थे। वस्तु की कीमत निश्चित करना, सुरक्षा की दृष्टि से लेन देन की रकमका और अनामत रकम का व्यवहार, मालवाहकों के सार्थ, उन की सुरक्षा का प्रबंध,पूरी वितरण व्यवस्था इस पर कारूम का नियंत्रण था। सीसा और बुने हुए वस्त्र असुरिया से आयात होते थे।

अनातोलिया से ताम्र, मौल्यवान मणि इनकी निर्यात होती थी।

नेसा में और अन्य नगरों में भी अनित्त ने संभवतः मंदिरों का निर्माण किया। नगरों के प्रशासक नियुक्त किये। ये प्रशासक खत्ती वंश से संबंधित राजपुत्र होते थे। खत्ती राज्य का यह प्रारंभ तो था परंतु इससे अधिक जानकारी इस प्रारंभिक राज्य की प्राप्त नही होती। पुरातत्वीय प्रमाणों के आधारपर अनित्त का काल इसापूर्व द्वितीय सहस्रक के प्रारंभ का है। परंतु अनित्त के पश्चात लगभग तीन सौ वर्षों का इतिहास नही मिलता। खत्ती इतिहास का प्रारंभ लगभग इसापूर्व सत्रह सदी में रखा जाता है।

खत्ती इतिहास का प्रारंभ काल - लबर्न (इसापूर्व १६८०-१६५०)[४]

खत्ती नरेश 'लबर्न' को अपना मूल पुरुष मानते थे। लबर्न का कोई अभिलेख नही मिला है। कुछ इतिहासकार अनित्त को खत्तीयों का मूल पुरुष मानते है। परंतु लबर्न उस का नाम नही है। इसापूर्व सोलहवी सदीके उत्तरार्ध में खत्ती नरेश तेलिपिनू के घोषणापत्र में लबर्न का उल्लेख आता है। उसमें कहा है,

''पहले लबर्न राजा था। उसके भाई, पुत्र, जामात और खून के रिश्तेदार संगठित हुए। उनके पास भूमि मर्यादित थी। अपने शत्रुओं की भूमि पर आक्रमण करके उसने उनको परास्त किया और राज्य का विस्तार किया। सागर तक राज्य की सीमाएँ पहुँची जब वह युद्ध से वापस आया तब उसके पुत्रों ने हुपिश्न, तुवनुवा, नेनस्सा, झल्लर, लान्द, परशुखण्ड और लुस्न के राज्य पर आक्रमण करके उसपर कब्जा किया।

खत्ती रिकार्ड, मुद्राएँ तथा अभिलेखों के आधारपर खत्ती इतिहास की रचना के जो प्रयास हुए उसमें प्रथम खत्ती नरेश तुधलीय (प्रथम) है। फिर भी उसने प्रत्यक्ष शासन किया या नही इसपर संदेह है। निश्चित रूपसे नही कह सकते। द्वितीय मुर्शिली की मुद्रा पर 'खुज्जिय' यह नाम आता है। यह नाम लबर्न के पहले आता है और उसे 'महाराज' कहा गया है। तुधलीय का पुत्र पू-शर्रूम के संदर्भ में भी अधिक जानकारी नही मिलती। पू शर्रूम का पुत्र पापादिल्म था। परंतु पू शर्रूम ने उसके जामात लबर्न को अपना वारिस घोषित किया। राजा के अनेक अधिकारी मंत्री और सेवक पापादिल्म के पक्ष में थे। इसके कारण अंतर्गत संघर्ष की स्थिती पैदा हो गयी। पू. शर्रूम राजधानी के बाहर सनाहवित्त में था तब विद्रोही अधिकारियों ने पापादिल्म को सिंहासन पर बिठाया। लबर्न ने सेना संगठित की। अंतिमतः संघर्ष में लबर्न विजयी हुआ। जिन जिन प्रमुख लोगों ने विद्रोह करके पापादिल्म का साथ दिया था उनको प्राणदंड दिया गया। अंतर्गत संघर्ष समाप्त होतेही लबर्न ने दूर दूर तक के राज्योंपर आक्रमण करके कृष्णसागर से मध्यसागर तक का विशाल प्रदेश जीता। प्रमुख नगरों में शासक नियुक्त किये। अर्झवा की भूमि भी खत्ती राज्य में आयी। अदनिया (सिलिशिया) के समृद्ध भूमिपर भी कब्जा किया। इस प्रकार लबर्न प्रथम खत्ती विजेता सिद्ध हुआ। इसापूर्व लगभग १७०० में पश्चिम एशिया में एक शक्तिशाली सत्ता का उदय हुआ। अगले पाँच सौ वर्ष पश्चिम

एशिया की राजनीति पर इस खत्ती महासत्ता का प्रभाव रहा। लबर्न के समय कुश्शर में ही शासन का केंद्र रहा।

खत्तीशील प्रथम (इसापूर्व १६५०-१६२०)[५]

लबर्न का विवाह तवन्नना नामक राजकुमारी से हुआ था। लबर्न और तवन्नना के अनेक पुत्र होंगे। परंतु तवन्नना के भाई का पुत्र खत्तीशील लबर्न के पश्चात राजपद पर आया। संभवतः लबर्न के पुत्रों में राजपद के लिये आपसी संघर्ष हुआ जिसका लाभ खत्तीशील को मिला होगा। इतिहासकारों ने खत्तीशील को पापादिल्म का पुत्र माना है। उस दृष्टि से सिंहासन पर उसका अधिकार था। लबर्न ने खत्ती राज्य की नींव डाली थी।

खत्तीशील के सामने राज्य का विस्तार और उस की स्थिरता का कार्य था। वह भी पराक्रमी और युद्धकुशल था। दक्षिण और पूर्वी दिशा में राज्य का विस्तार करना यह उसका लक्ष्य था। सिंहासन प्राप्ती के प्रथम वर्ष में ही राज्य के सुरक्षा की समस्या खडी हुई थी। सनवित्त में विद्रोह खडा हुआ था। झल्पा में भी संभवतः वहाँ के खत्ती शासक को दूर करके राज्यक्रांती हुई थी। खत्तीशील ने अपना अभियान सनवित्त से शुरु दिया । सनवित्त के आसपास का भूप्रदेश उसने जलाकर राख कर दिया। सनवित्त पर उसने कब्जा नही किया। झल्पापर आक्रमण करके पूरा नगर ध्वस्त कर दिया। शत्रू सेना के रथ, युद्धसाहित्य आदि खत्ती सेना के हाथ में लगे। विजय के पश्चात खत्तीशील ने अरिन्ना (सूर्यदेवी) देवी को चार पहियेवाले तीन रथ अर्पण किये। वायुदेव के मंदिर में एक चांदी की कुल्हाडी और एक चांदी की मुष्टि भेंट चढाई।

तौरस पर्वतशृखंला की पूर्व दिशा में सीरिया का भूप्रदेश था। तौरस की घाटी की सुरक्षा खत्ती राज्य के लिये महत्व रखती थी। घाट के पार यम्हद का राज्य था। यह राज्य बडा समृद्ध था। अलेप्पो उस की राजधानी थी।

खत्तीशील ने दूसरे वर्ष में यम्हदपर आक्रमण किया। यम्हद की सेना पराजित हुई। अलेप्पो पर खत्ती शासन लागू किया गया। सीरिया में जाने का मार्ग अलेप्पो से जाता था। अलेप्पो युफ्रेट नदी के तीर पर था। खत्ती सेना पहली बार तौरस की घाटी पार करके युफ्रेट नदी के तटपर पहुंची थी। वहाँ से सीरिया में प्रवेश करके अललख पर खत्ती सेनाने आक्रमण किया। अभी तक जो

अललख का शासन था वह अलेप्पो (हलब) के राज्य के अधीन था। खत्तीशील ने अललख पर आक्रमण करके नगर को जला दिया।[६]

सीरिया पर आक्रमण

अलेप्पो और अललख पर कब्जा करते ही खत्तीशील ने सीरिया में अंदर तक प्रवेश किया। सीरिया के राज्योंपर प्रभुत्व निर्माण होना खत्ती राज्य के लिये बहुतही महत्वपूर्ण घटना थी। भविष्य में खत्ती आंतरराष्ट्रीय सत्ता बने इसका वह प्रारंभ था। अललख के आगे उत्तर सीरिया का एक महत्वपूर्ण उर्शू का राज्य था। उर्शू के युद्ध की जानकारी एक खत्ती आख्यान में प्राप्त होती है।[७]

खत्तीशील ने उर्शू के पास लुहुजंतिया में खत्ती सेना का शिबीर डाला। नगर के पास पहाडीपर सीरिया की सेनाने मोर्चा लिया था। खत्ती सेनाने उर्शू नगर को घेरा डाला। पहाडीपर की शत्रुसेना उनके लिये बडा खतरा बन गयी थी। घेराबंदी कडक करनेपर भी शत्रु शरण नही आ रहा था। शत्रु ने तट की दिवारे तोडनेवाले खत्ती नायक इरियव ने तटनाशक स्तंभ और दमदमा (टॉवर) लाने का अभिवचन दिया था परंतु वह निष्क्रीय रहा। खत्ती सेनापती 'संता' पर खत्तीशील नाराज हुआ। उसने संता को कहा, 'तुमने तो नारी जैसा वर्तन किया। आप क्यू नही युद्ध करते ? सभी नगर की ओर जानेवाले मार्ग पर कडी निगाह रखो। नगर के अंदर जानेवाले और बाहर आनेवालों को पकडो। झारूर, हलप,झुल्पा किसी भी नगरोंसे और हरी (हुरियन्स) सेनासे शत्रू का संपर्क नही होना चाहिये।' अंतिमतः उर्शू पर कब्जा हो गया। उर्शू से आगे इककाली और ताशिनिया तक का भूप्रदेश खत्ती सेनाने काबीज किया।

इस प्रकार खत्ती राज्य का विस्तार तो होने लगा परंतु उस दृष्टिसे मुल्की एवं अन्य प्रशासन ठीक नही था। विजित भूप्रदेश पर शासक नियुक्त करके वहाँ पर पर्याप्त खत्ती सेना रखना आवश्यक था। नये स्थानपर वहाँ के स्थानिक लोगों का सहयोग प्राप्त करना आसान नही था। विस्तार के पश्चात विजित स्थानों पर स्थानिक विद्रोह होना नैसर्गिक घटनाएँ थी। खत्ती राज्य का केंद्र पहले कुश्शर में था। खत्तीशील ने खत्ती (खत्तुशस या खत्तुश) नगर में राजधानी स्थलांतरित की। अपने पिता की लबर्न यह उपाधि धारण की।

सीरिया के अभियान से लौटतेही उसे अनेक स्थानपर विद्रोहियों से

संघर्ष करना पडा। पश्चिम अनातोलिया में अर्झवा राज्य ने स्वाधीनता घोषित की थी। हनिगल्बत राज्य की हरी (हुरियन्स) सेना ने खत्ती राज्यपर आक्रमण करके प्रमुख नगरों में लूटमार की थी।[८]

खत्तीशील ने अर्झवा (शिलिशिया) पर आक्रमण करके वहाँ के विद्रोहियों के नगर नष्ट किये। नेनस्सा में खत्ती सेना का प्रतिकार नही हुआ। परंतु उल्मा में कडा संघर्ष हुआ। उल्मा पर विजय प्राप्त करके भारी लूट के साथ वह उत्तर में लौटा। सात देवताओं की मूर्तियाँ साथ में लेकर खत्तीशील खत्तीनगर में पहुँचा। अरिन्ना देवी के मंदिर में उन देवताओं की स्थापना की गयी। खपिलन्नी पर्वत की देवी कतिती की स्थापना भी अरिन्ना देवी के मन्दिर में की गयी। अनेक मंदिरों को उसने दान दिया। इसके पश्चात सनवित्त के विद्रोह का शमन करके खत्तीशील ने फिरसे सीरिया का अभियान हाथ में लिया। युफ्रेट नदी पार करके खत्ती सेना खश्शु में पहुँची। खश्शु यम्हद (हलप-अलेप्पो) राज्य में था। यम्हद का राजा यरीम लिम (तृतीय) ने उसका पुत्र खम्मुरावी को युद्ध पर भेजा। यम्हद की सेना भी उस की सहायता के लिये आयी खश्शु सेना के साथ खत्ती सेना का कडा संघर्ष हुआ। यह युद्ध अमानुस पर्वतशृंखला के अदलुर की पहाडी में हुआ। युद्ध के बाद खत्ती सेनाने खश्शु नगर को पूरी तरह से नष्ट कर दिया। यम्हद राज्य के अनेक नगर लूट कर खत्तीशीलने राजधानी में पहुँचने के बाद उस लूटी हुई संपत्ती का खत्ती नगर के मंदिरों को दान कर दिया।

खत्ती राज्य अब साम्राज्य में परिवर्तित हुआ था। खत्तीशील ने अपने पश्चात खत्ती सिंहासन के लिये अपने बहन के पुत्र को गोद में लेकर उसे वारिस घोषित किया था। परंतु वह राजा बनने के योग्य नही था। उसने खत्तीशील के विरोध में ही षड्यंत्र किया। स्वयं खत्तीशील अलेप्पो के युद्ध में जख्मी हुआ था। खत्तीशील ने षडयंत्र में शामिल रिश्तेदार, अधिकारी इनको कडी सजा दी। लबर्न (अपने बहन के पुत्र) को निष्कासित कर दिया। उसके स्थानपर मुर्शिली को युवराजपद दिया गया। मुर्शिली किशारावस्था में था। खत्तीशील ने फिर अपने मंत्री परिषद सदस्य, राजपरिवार, सेनानायक, सरदार, ज्येष्ठ पौरजन इनकी सभा बुलायी और मुर्शिली को राज्य का उत्तराधिकारी घोषित किया। यह घोषणापत्र खत्ती कीलाक्षर लिपि में प्राप्त हुआ है।[९]

महान लबर्न का घोषणापत्र

महान लबर्न ने कहा, ''देखो, मेरा स्वास्थ्य ठीक नही है। मैंने युवा लबर्न को मेरा पुत्र कहा, उसे सारा प्यार दिया। मेरा उत्तराधिकारी घोषित किया परंतु वह सिंहासन के लिये अयोग्य सिद्ध हुआ। दया, करूणा से विपरीत हृदयहीन, कृतघ्न निकला। उसने अपने माता का कहना मानकर विद्रोह किया। आगेसे कोई अपने बहन के पुत्र को दत्तक नही लेगा। उसे अपना पुत्र नहीं समझेगा।

मैंने उसे प्रासाद दिया। भूमि और धन दिया। फिर भी उसने विद्रोह किया। अब वह अपने घरमें ही रहे। अपने घर के बाहर पाँव ना रखे। अब मुर्शिलीही मेरा पुत्र है। तीन वर्षों के बाद आप युद्ध पर निकलेंगे तो वह आप के अभियान में सम्मिलित होगा। आप उसकी रक्षा करेंगे। अभी तक परिवार में किसीने मेरी आज्ञा का पालन नही किया। परंतु, मुर्शिली तुम मेरी आज्ञा का पालन करना। अच्छी तरह खा पी कर बडे बनो। वृद्धावस्था तक जिओ।

और अब मेरे प्रमुख सेवक - आप भी सुनो आप केवल रोटी खाएंगे और पानी पिएंगे। खत्ती राष्ट्र और खत्ती भूमि तो ही संपन्न होगी। देश में शांती रहेगी। अगर राजा की अवज्ञा करोगे तो तुम्हारा विनाश होगा। मेरे दादाजी ने सनवित्त में उनके पुत्र लबर्न को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था। परंतु कुछ नेताओं ने विद्रोह करके पापादिल्म को राजपद दिया। इतने वर्षों में आप देख चुके है, जिन्होंने विद्रोह का साथ दिया उनमें से कौन बच निकले ? सभी का नाश हुआ की नही ? और मुर्शिली, तुम समय नही गवाओगे, ना आराम करोगे। अगर तुमने अवसर गवाया तो तुमसे भी वही पुरानी भूल होगी। इसलिये अपने हृदय को साक्षी रखकर सावधानी से निरंतर काम करते रहो।''

मुर्शिली (प्रथम) १६२०-१५०० इसापूर्व

मुर्शिली जब राजपद मिला तब किशोर अवस्थामें था। प्रारंभ के समय में विद्रोह की आशंका थी। परंतु खत्तीशील के समय के सेनानी और मंत्री स्वामिनिष्ठ थे। युवावस्था में मुर्शिली ने अपनी योग्यता प्रकट की । उत्तर सीरिया पर खत्ती शासन का प्रभुत्व था । एक खत्ती राजकुमार को अलेप्पो का शासन सौपा था। परंतु यम्हद राज्यने खत्ती प्रभुता को चुनौती दी। खत्ती

राजकुमार को खदेडकर विद्रोहीयोंने अलेप्पो में शासन अपने हाथ में लिया। मुर्शिली खत्ती सेनासहित अभियानपर निकला। अश्वरथ दल खत्ती सेना की विशेषता थी।

मुर्शिली की सेना में अस्सी रथ थे। खत्ती रथ को दो अश्व जोते जाते थे। रथचक्र छः आरे के रहते थे। युद्ध में दो पहियों के रथ का ही महत्व था। एक रथ में तीन रथी रहते थे। धनुष्य बाण और लंबे शूल उनके शस्त्र थे। युद्धसाहित्य, अनाज आदि ले जाने के लिये चार पहियों के रथ होते थे। उनको बैल या जंगली गधों से खिचवाया जाता था। साहित्य की सुरक्षा एवं संदेशवहन के लिये अश्वारोही रहते थे। तौरस पर्वत की घाटी से उतरकर खत्ती सेनाने अलेप्पो पर आक्रमण किया। वहाँ के विद्रोहियों की सहायता के लिये हरी सेना भी आ गयी थी। अलेप्पो खत्ती सेना के हाथ में आया। अलेप्पो नगर का खत्ती सेनाने बुरी तरह से विनाश किया। विद्रोहीयों को मारकर फिर से खत्ती शासन लागू किया।

खत्ती सेना अब विजय के उन्माद में थी। उत्तर सीरिया पर तो अधिकार हो ही गया था। युफ्रेट नदी पार करने के पश्चात मुर्शिली की दृष्टि युफ्रेट के दक्षिण के समृद्ध घाटी पर गयी। बाबिलोन पर इस समय अमोराइट वंशीय समसुदीत का राज्य था। मुर्शिली ने बाबिलोन पर आक्रमण किया।[२०]

यह साहस तो था ही। परंतु बाबिलोन नरेश समसुदीत निर्बल था। खम्मुराबी के समय की शक्ति अब बाबिलोन की सेना में नही थी। खत्ती सेना जोश में थी। सहजता से बाबिलोनपर कब्जा हुआ। अक्काद पर खत्ती शासन स्थापित करके बाबिलोन में एक खत्ती राजकुमार को शासक बनाया गया। खत्ती साम्राज्य अब विशाल हो गया था। पश्चिम में सागर तक और दक्षिण में मेसोपोटामिया तक विस्तार हो गया था। वर्तमान टर्की, सीरिया, लेबनॉन, इराक और आरमीनिया का विशाल भूप्रदेश इस प्राचीन खत्ती साम्राज्य में था।

प्रशासन की दृष्टि से इतने विशाल साम्राज्य पर नियंत्रण रखना असंभव था। पचास वर्ष के अंदर यह विस्तार हुआ था परंतु खत्ती राजवंश की परंपरा स्थापित नही हुई थी। ना साम्राज्य की प्रतिष्ठा निर्माण हुई थी। प्रशासन के लिये आवश्यक अनुभवी अधिकारीयों की कमी थी। विस्तार के साथ ही

शत्रुता भी आती है। पराजय की प्रतिक्रिया होती रहती है। विद्रोह भडकते है। खत्ती साम्राज्य इसी प्रक्रिया से गुजर रहा था। मुर्शिली प्रदीर्घ कालतक युद्ध पर ही रहता था। राजधानी में उसकी अनुपस्थिती के कारण उसके पीछे क्या हो रहा है इसकी वार्ता उसको नही थी। मुर्शिली का बहनोई खंतिली इस परिस्थिती का लाभ उठाने की प्रतिक्षा में था। उसको शिदन्त की सहाय्यता मिली। मुर्शिली प्रदीर्घ काल के पश्चात खत्तीनगर में पहुँचतेही उसकी हत्या हो गयी।

खंतिली (प्रथम) इसापूर्व १५९०-१५६०

मुर्शिली की हत्या करके खंतिली राज्यपर आया।[२१] राजपरिवार में षड्यंत्र, हत्याएँ, विद्रोह इस प्रकार की राजनीति खत्ती राज्य का अभिशाप था। खंतिली के समय इसी प्रकार की राज्यक्रांती के कारण अराजकता फैली। अनेक स्थानपर विद्रोह खडे हुए। आपसी संघर्ष के कारण शासन का नियंत्रण नही रहा। वान सरोवर के पास की पहाडी में हरी सत्ता थीं उन के लिये यह अच्छा अवसर था। हरी सेनाने खत्ती सीमापर आक्रमण किया। राजधानी के पूर्व में नेरिक और तिलिरा ये महत्वपूर्ण खत्ती नगर थे। हरी सेनाने दोनो नगरों का विनाश किया। राजधानी के लिये भी हरी सेना से खतरा दिखता था। खत्ती नगर की सुरक्षा के लिये खंतिली ने तट की दीवारे मजबुत की। दक्षिण में भी विद्रोह खडे हुए। सीरिया और बाबिलोनिया में खत्ती शासक मारे गये। इस स्थिती से उभरना खंतिली के बस में नही था। फिर भी खंतिली दीर्घ काल तक राज्यपर था। उस के पश्चात भी लगभग पचास वर्षों तक खत्ती राज्य में अराजकता फैली थी।

लगभग इसापूर्व १५६० से १५२५ तक झिदन्त, अम्मुन और हुज्जिय ये तीन राजा हो गये। उसके पश्चात् तेलीपिनू राजा बना।

तेलीपिनू (१५२५-१५००)

तेलीपिनू हुज्जिय (प्रथम) की बहन इष्टपरिया का पति था। हुज्जिय को तेलीपिनू और इष्टपरिया दोनों से अपने राजपद को खतरा लगता था। इसलिये उन दोनों की हत्या करने की योजना उसने बनाई। परंतु तेलीपिनू को पहलेही उसकी जानकारी मिली। उसने हुज्जिय और उसके समर्थकोंको

निकालकर राजपद प्राप्त प्राप्त किया। हुज्जिय के पाँच भाई थे। सब को निष्कासित कर दिया था। परंतु हुज्जिय फिर भी तेलीपिनू के विरोध में षड्यंत्र करता रहा। अंतिमतः हुज्जिय और उनके भाईयों की हत्या की गई। इन घिनौनी राजनीती में रानी इष्टपरिया की भी हत्या हो गयी। तेलीपिनू ने फिर कठोरतासे अपने सभी विरोधीयों को प्राणदण्ड दिया और अपना मार्ग निष्कंटक दिया।

तेलीपिनू ने राज्य का विस्तार नही किया। अंतर्गत समस्याएँ तो थी ही, साथ में साम्राज्य के पश्चिम और दक्षिण के राज्यों में निरंतर विद्रोह हो रहे थे। पूर्वी सीमापर हरी आक्रमण का खतरा रहता था। तेलीपिनू ने हरी सेना को पराजित करके खत्ती सीमापर की सुरक्षा व्यवस्था बढाई ।

अर्झवा के राज्य ने स्वतंत्रता घोषित की थी। परियवत्रि का पुत्र इस्पुताशू वहाँ का राजा था। वह महाराजा कहलाता था। तेलीपिनू ने किशुवल की स्वतंत्रता को मान्यता दी और उस के साथ राजनैतिक संधि किया। लबर्न के समय से किझुवत्न खत्ती साम्राज्य में था। अब वह पडोसी राष्ट्र बन गया। मुर्शिलीने मेसोपोटामिया में अक्काद पर विजय प्राप्त करके वहाँ खत्ती शासक को नियुक्त किया था। इतने दूर के राज्य पर नियंत्रण रखना यह समस्या थी। बार बार युद्ध की स्थिती निर्माण होती थी। तेलीपिनू ने वहाँ के खत्ती प्रशासन को सुधारकर स्थानिक समाज को प्रशासन में सहभागी करनेकी नीति अपनायी।

तेलीपिनू ने उसके कार्यकाल में खत्ती राष्ट्र को स्थिर और कार्यक्षम प्रशासन देनेका प्रयास किया। उसका सबसे महत्वपूर्ण कार्य था राजवंश में राज्यवंश का वारस चूनने की आचारसंहिता। राजपुत्र, राजकुमारियाँ, रानीयाँ, जामात और राजवंश से संबंधित रिश्तेदार इनकी महत्वाकांक्षा के कारण राज्यप्राप्ती के लिये बार बार हत्याएँ होती थी। विद्रोह भडकते थे। खत्ती राज्य की स्थिरता, प्रतिष्ठा धोखे में आ जाती थी। गत पचास वर्षों से इसका अनुभव खत्ती राष्ट्र ले रहा था। मुर्शिली की हत्या के पश्चात जिस प्रकार की अराजकता फैली उससे साम्राज्य शिथिल हो गया था और खत्ती साम्राज्य के अस्मिता पर गहरी चोट लगी थी। राजा के उत्तराधिकारी के लिये नियम बनाये गये। राज्य के वारिस की नियुक्ति, राजा का प्रजासे एवं राजकीय अधिकारियों से व्यवहार, मंत्रि परिषद के सदस्य, सरदार, सेनापति इनका राजा के प्रति व्यवहार एवं उनका कर्तव्य राजपुत्र, राज्यपाल इनका व्यवहार और कर्तव्य इन विषयों की

आचार संहिता बनायी गयी। इस आचार संहिता का पालन खत्ती राष्ट्र में अंतिम राजा तक होता रहा। तेलीपिनू महाराजा तबर्न (लबर्न) कहलाता था।

अलुवम्न-खंतिली (द्वितीय)-तहुरवेली-झिदंत-हुज्जिय

इसापूर्व लगभग १५०० से १४६० के बीच चालीस वर्षों के काल में पाँच राजाओं का कार्यकाल दिखाई देता है। इस काल का विश्वसनीय रिकार्ड नही मिलता। तेलीपिनू के पश्चात उसका जामात अलुवम्न राज्यपर आया। उस की मुद्रा (सील) प्राप्त हुई है। उसपर उस की महाराजा तबर्न यह उपाधि अंकित है। उसके रानी का नाम हरप्शिाली था। इसके समय में हरी सत्ता शक्तिशाली बन रही थी। हरी सत्ता के कारण ही मितन्नि राष्ट्र का उदय हो रहा था। अलुवम्न के पश्चात खंतिली (द्वितीय) राजा बना। वह अलुवम्न का पुत्र था। और उसने भी स्वयं को महाराजा तबर्न की उपाधि ली थी। उस समय की राजनीति में कोई परिवर्तन हो ऐसी क्षमता उसमें नही थी। किझुवत्न के राजा के साथ उसने मित्रता की संधि की। खंतिली द्वितीय के पश्चात संभवतः तहुरवेली राजपद पर आया। उस की मुद्रापर भी 'तर्बन, महाराजा, खत्ती नरेश ये उपाधियाँ अंकित है। खत्ती राज्य की दुर्बलता दूर करने की क्षमता उस में भी नही थी। तहुरवेली के पश्चात झिदंत (द्वितीय) की मुद्रा प्राप्त होती है। उसके पश्चात हुज्जिय (द्वितीय) राजा बना दोनों की मुद्राओंपर महाराजा और तबर्न ये उपाधियाँ अंकित है।'

मितन्नि राज्य का उदय

पश्चिम एशिया में इसापूर्व १५वी सदी में एक और प्रभावी सत्ता का उदय हुआ। अनातोलिया के पूर्व में और असुरिया के उत्तर पश्चिम में मितन्नि राष्ट्र का उदय हुआ। मितन्नि की जनसंख्या में हरी जनसंख्या प्रमुख थी। उनका ही बाहुल्य था। हरी पहलेही खत्ती राष्ट्र के शत्रु थे। मितन्नि राष्ट्र का आधार हरी समाज था। उन्होंने असीरिया पर अधिकार स्थापित किया था। खत्ती राष्ट्र के दुर्बलता का लाभ लेकर सीरिया के खत्ती प्रभुत्व को मितान्नि ने चुनौती दी।

झिदंत द्वितीय (१४८०-१४७०) के काल में मितन्नि का हरी नरेश परातर्ण ने किझुवत्न पर आक्रमण किया। किझुवत्न नरेश पिल्लीय को मितन्नि के

अधीन होना पडा। किझुवन्त और ख़त्ती राष्ट्र में राजनैतिक करार तो था परंतु ख़त्ती नरेश झिदंत अपने मित्र राष्ट्र की सहायता नही कर सका।

ख़त्तीशील प्रथम ने मेसोपोटामिया तक अभियान किया था। परंतु ख़त्ती शासन वहाँ विशेषतः अक्काद पर कभी स्थिर नही हुआ। परंतु बाबिलोन की सत्ता दुर्बल हो गयी थी। बाबिलोन पर कश्शु, जाति ने अपने वंश की सत्ता स्थापन की। कश्शु सत्ता स्थापित करनेवाला उनका मूल पुरूष गण्डाश नामक व्यक्ति था। सुमेर और अक्कादपपर कब्जा करके वह चतुर्दिक स्वामी कहलाता था। मितन्नि, ख़त्ती और मिश्र के साथ उन के राजनैतिक संबंध थे।

पश्चिम एशिया में मिश्र (इजिप्त) का प्रवेश

इसापूर्व सोलहवी शती के पूर्वार्द्ध में मिश्रमें अठारहवे वंश के शासक आये। हैक्सास के अधिपत्य का अंत हो गया था। अठारह वंश के फारो (राजा) महत्वाकांक्षी थे। अमेन होतेप (प्रथम) ने सीरिया के उत्तर में आक्रमण किया उस समय बाबिलोन पर कश्शु सत्ता थी। कश्शु राजनीति से जादा व्यापार में दिलचस्पी रखते थे। ख़त्ती और मितन्नि राज्यों का उत्कर्ष हो रहा था परंतु उनकी सत्ता अनातोलिया और उसके आसपास में थी। असुरिया अभी तक पर्याप्त शक्तिशाली नही हुआ था।

थोथमेस प्रथम की मिश्री सेना सीधी नहरीन तक पहुँची। वहाँ उन्होंने मिश्र के साम्राज्य की सीमा दर्शानेवाला स्मृतिलेख खडा किया । अलेप्पो नहरीन में था।[१२] मिश्री अधिपत्य अलेप्पो तक पहुँच गया फिर भी उत्तरी सीरिया के राज्य मितन्नि का अधिपत्य मानते थे। ओरोंटे नदी पर का देश एक प्रमुख राज्य था। इसापूर्व १४७९ में थोथमेस तृतीय ने पॅलेस्टाईन पर आक्रमण किया। फिनिशिया और लेबनान में मिश्री सेना पहुँची। कादेश के राजा के नेतृत्व में सीरियायी राज्य संघटित हुए। परंतु मिश्री सेनाने मेगिड्डो में उनको पराजित किया। अमानुस पर्वत शृंखला से युफ्रेट नदी तक के भूप्रदेशपर मिश्री प्रभुत्व निर्माण हुआ। मिश्र के लिये यह साम्राज्य विस्तार प्रतिष्ठा की बात थी। मिश्र के एशियायी साम्राज्य के कारण मितन्नि और मिश्र में राजनैतिक संबंध निर्माण हो गये। थोथमेस चतुर्थ को भी सीरिया में हुए विद्रोह के कारण फिरसे अभियान लेना पडा। मितन्नि नरेश अर्ततम की कन्यासे उसका विवाह हुआ।

थोथमेस और यह मितन्नि राजकुमारी (मिश्री नाम मुतेमुआ) इनकाही पुत्र आमेनहेतेप (तृतीय) था उसका विवाह मितन्नि नरेश शुतर्ण की कन्या गिलुखिपा से हुआ।[१३]

मितन्नि और ख़त्ती राष्ट्र में संघर्ष होनेवाला ही था। उत्तरी सीरिया में महत्वाकांक्षी ख़त्ती नरेश उनका अधिपत्य चाहते थे। और भविष्य में जब मितन्नि ख़त्ती सम्राटों के द्वारा पराजित होकर नष्ट हुए तब मिश्र और ख़त्ती ये दो महासत्ताएँ आमने सामने खडी हुई।

मुवतल्ली (प्रथम), तुधलीय (द्वितीय) १४६०-१४४०

हुज्जिय द्वितीय और तुधलीय (द्वितीय) के बीयच संभवतः अल्पकाल मुवतल्ली (प्रथम) राजपद पर था। उसकी भी मुद्रा प्राप्त हुई है। मुवतल्ली के विरोध में वह राजपद पर आतेही षड्यंत्र शुरू हो गया था। मुवतल्ली की हत्या हुई। उसका भाई 'मुवा' राजा के रक्षादल का प्रमुख भाग गया। उसने हरी राज्य में आश्रय लिया। विद्रोही नेताओं में एक कंतुझिली नामक व्यक्ति था उसने तुधलीय का साथ दिया। हरी सेना की सहायता मुवा को प्राप्त हो गयी थी। संघर्ष मे कंतुझिली और तुधलीय विजयी हो गये। संभवतः तुधलीय राजवंश से संबंधित था।[१४]

तुधलीय ने मितन्नि (हरी सेना) को पराजित किया थां उसके परिणाम स्वरूप अलेप्पो (हलप-यम्हद राज्य) ने मितन्नि की अधीनता छोडकर ख़त्ती राज्य की अधीनता स्वीकार की। परंतु मितन्नि सत्ता दुर्बल नही थी। मितन्नि की सेनाने हलप पर आक्रमण करके अपना अधिपत्य कायम किया।

पश्चिम की सीमापर अहिय राज्य था। अत्तऋषिय उस का शासक था। मदुवत्त नामक व्यक्ति के साथ उसका संघर्ष हुआ। मदुवत्त को अपने अनुयायी और परिवार सहित भागना पडा। अत्तऋषिय ने उस का पीछा नही छोडा। मदुवत्तने तुधलीय से सहायता माँगी। तुधलीय ने उसे रथ, अनाज आदि सहायता तो दी। उसके सिवाय झिप्पश्न के प्रदेश में उसको शासक के रूप में स्थापित किया। उसके रूप में पश्चिम में ख़त्ती सत्ता के अधीन एक नये राज्य का निर्माण हुआ।

अर्झवा से खत्ती राष्ट्र का शत्रुत्व था। तुधलीय ने मदुवत्त के लिये सहायता करते समय शर्त रखी थी की वह अर्झवा को शत्रु समझे। मदुवत्त महत्वाकांक्षी था। उसने अपनी सेना संगठित करके अर्झवा नरेश कुपंत कुरूंतिय पर आक्रमण किया। परंतु उसका परिणाम भयंकर हुआ। कुपंत कुरुंतियने मदुवत्त को पराजित किया। मदुवत्त जान बचाके भाग गया परंतु उसका परिवार और अन्य अनेक लोगों को बंदी बनाकर शल्लवश्शी में रखा गया। तुधलीय ने पिशेनी और पुष्कुरुनुवा को रथदल और पदाति सेना के साथ अर्झवा पर आक्रमण के लिये भेजा। खत्ती सेनाने शल्लवश्शी पर आक्रमण करके नगर में प्रवेश किया। अब कुपंत कुरुंतिय जान बचाकर भाग गया। नगर में मदुवत्त का पूरा परिवार सुरक्षित था। तुधलीय ने मदुवत्त को फिरसे शासक के रूप में स्थापित किया।

तुधलीय ने प्रदीर्घ काल के पश्चात खत्ती राष्ट्र को फिरसे खोयी हुई प्रतिष्ठा प्राप्त करा दी। अर्झवा खत्ती सत्ता के अधीन हो गया। अलेप्पो में खत्ती शासक नियुक्त हुआ। मितन्नि को पराजित किया। अनातोलिया के उत्तर पूर्व में कस्का जनजातीने अपने उपनिवेश स्थापित किये थे। यह पहाडी इलाका था। तुधलीय को उनके विरूद्ध अभियान करना पडा। साम्राज्य को प्रतिष्ठित करने के लिये तुधलीय को निरंतर युद्ध पर जाना पडा फिर भी शासन की दृष्टि से कुछ सुधार आवश्यक था। खत्ती कायदा और न्यायव्यवस्था में उस दृष्टि से परिवर्तन लानेका प्रयास उसने किया। आंतरराष्ट्रीय करार करते समय भी भविष्य में उसको सामने रखकर करार किये गये। किझुवत्न (अर्झवा) जीतने के बाद जब संधि किया तब जो शर्तें रखी थी उसमें एक शर्त थी 'जब तुधलीय विदेशी शत्रु के विरुद्ध अभियान पर निकलेगा तब किझुवत्न एक सौ रथ और एक सहस्र सेना खत्ती सेना के साथ भेजेगा।'

मिश्र के साथ खत्ती राष्ट्र का संबंध भी संभवतः तुधलीय के काल में आया। सिलिशिया के पास आलशीय की भूमिपर मिश्र का अधिपत्य था। सिलिशिया पर खत्ती अधिपत्य था। खत्ती क्षेत्र के कुरुष्टम नामक नगर के कुछ लोग मिश्री अधिपत्य की भूमि पर निवास करते थे। उस के संदर्भ में खत्ती और मिश्र में करार किया गया।

अर्नुवंद (प्रथम) १४००-१३८५

तुधलीय के पश्चात अर्नुवन्द (प्रथम) ने राजपद प्राप्त किया। तुधलीय और रानी निकालमति की कन्या अश्मुनिकाल का वह पति था। खत्ती राज्य में राजा अपने कार्यकाल में ही युवराज पद की अर्थात अपने उत्तराधिकारी की घोषणा करता था। उस को तुहुकंति कहते थे। तुधलीय ने अर्नुवंद को तुहुकंति घोषित किया ही था।

राज्य पर आतेही कस्की जनजाति के निरंतर चलते आये आक्रमण का सामना करना पडा। कस्की खत्ती नगरों पर अचानक आक्रमण करते थे। लूट पाट करते थे। मंदिरों की मूर्तियों का विनाश करते थे। खत्ती सेना आते ही पहाडी में चले जाते थे। उनका उपद्रव बहुत बढ गया था। खुर्शम, कष्टम, शेरिशा, हिमुवा तग्गष्ट, कम्मम, कपिरुहा, खुर्ना, तपसावा, इललुहा, झिहन, शिपिडुवा, वशाय, पाटलिय आदि स्थान कस्कीयों के हाथ में चले गये थे। सबसे बडी हानी नेरिक में हुई। नेरिक वायुदेवता (स्टॉर्म गॉड) का महत्वपूर्ण क्षेत्र था। सभी स्थान अर्नुवंद नही जीत सका। कस्कीयों के साथ युद्ध चलताही रहा।

अहियवन नरेश अत्तऋषिय ने खत्ती के अधीनस्थ मदुवत्त पर आक्रमण किया। खत्ती सेना ने अत्तऋषिय को पराजित किया। अत्तऋषिय ने अलशिय पर कब्जा किया था। मदुवत्त ने अलशिय पर फिरसे अपना अधिपत्य स्थापित किया। मितन्नि के साथ भी अर्नुवन्द को संघर्ष करना पडा। मितन्नि अभी भी शक्तिशाली थे। संभवतः मितन्नि नरेश दुशरट्ट (दशरथ) ने खत्ती सेना को पराजित किया। अर्नुवंद को उसके कार्यकाल में निरंतर युद्धरत रहना पडा।

अर्नुवंद के पश्चात कुछ इतिहासकार खत्तीशील द्वितीय को उसका उत्तराधिकारी मानते है। परंतु अर्नुवंद का पुत्र तुधलीय तृतीय उस के पश्चात राज्य पर आया इसके भी प्रमाण है।[१५]

तुधलीय (तृतीय) - १३८५-१३८०

अर्नुवंद के पश्चात तुधलीय (तृतीय) को राज्य प्राप्त हुआ। तुधलीय और महारानी शतांदुखेपा इनकी संयुक्त मुद्रा मिली है। अर्नुवंद के काल में जो कस्की आक्रमण चल रहे थे उसने और उग्र रूप लिया था। बार बार आक्रमण हो रहे थे। पश्चिमी सीमा पर अर्झवा ने आक्रमण किया था। तुधलीय ने अर्झवा की

सेना का प्रतिकार किया। समूह में खत्ती सेना की छावनी रखी। उसके साथ युवा पुत्र सुप्पिलुलीम भी था। उसी समय कस्की टोलियाँ खत्ती नगर में घुस गयी। उन्होंने खत्ती नगर में आग लगाई। नगरवासी भाग गये। सुरक्षा के लिये रखी गयी खत्ती सेना लगभग नष्ट हुई। युवा सुप्पिलुलीम ने अपने पिता से प्रार्थना करके कस्की आक्रमण का सामना करने के लिये उसकी आज्ञा ली। सुप्पिलुलिम ने खत्ती सेना का नेतृत्व किया। खत्ती नगर से कस्कीयों को खदेडकर राजधानी मुक्त की राजधानी में प्रजा को बुलाकर उनका पुनर्वसन किया।

मितन्नि राष्ट्र उसकी अंतर्गत समस्याओं के कारण दुर्बल हो रहा था। फिर भी उसकी शक्ति टूटी नही थी। अनेक स्थान पर राज्यों में विद्रोह होते थे। विद्रोहियों को मितन्नि सत्ता का समर्थन था। तुधलीय बुद्धिमान था। रणक्षेत्र में भी कुशलता से सेना संचालन करता था। परंतु खत्ती राष्ट्र सभी ओर से संकटों से घिरा हुआ था। खत्ती राजकुमार ने कुछ विजय अवश्य प्राप्त किये फिर भी तुधलीय का शासनकाल अयशस्वी रहा।

सुप्पिलुलिम प्रथम : १३८०-१३४०

तुधलीय (तृतीय) का पुत्र सुप्पिलुलिम जब राजपद पर आया तब पतन की ओर चले हुए खत्ती राष्ट्र को उसके रूप में मानो संजीवनी प्राप्त हो गयी। खत्ती इतिहास की अखण्डता पर विघटन और पराजितता की छाया दिखाई दे रही थी जिसे उसने दूर किया। उसके पश्चात सभी महान खत्ती नरेश शासकीय रिकार्ड में अपने को सुप्पिलुलिम के वंश से जोडने में गौरव का अनुभव करते थे।[१६] तुधलीय के पश्चात वैसे तो युवराज तुधलीय को उत्तराधिकारी घोषित किया हुआ था। परंतु खत्ती राष्ट्र को अब अनुभवी और पराक्रमी शासक की आवश्यकता थी। सुप्पिलुलिम ने अपने पिता के समयही अपनी योग्यता सिद्ध कर दी थी। अंतिमतः राज्यक्रांती हुई। युवराज और उसके समर्थक मारे गये। सुप्पिलुलिम शासक बन गया। सत्ता परिवर्तन के साथ उसने शासन में अनेक आवश्यक बदल किये। अपने भाई झिदा को राजा के रक्षा दल का प्रमुख बनाया। पुत्र तेलिपिनू को किझुवत्न का धर्मगुरू पद दिया।[१७]

सुप्पिलुलिम अनुभवी कुशल सेनानी था। कस्की टोलीयों ने जब खत्ती नगर लूटकर जला दिया था तब उसनेही राजधानी का पुर्नवसन किया था और

कस्कीयो पर धाक जमायी थी। फिर भी पहले राजधानी की सुरक्षा का उचित प्रबंध उसने किया। कस्कीयों के मार्ग पर चौकियाँ लगाई। फिर पश्चिमी सीमा की ओर उसने ध्यान दिया। पश्चिम में अर्झवा यह शत्रुराज्य ही बन गया था। सुप्पिलुलिम को उस पर आक्रमण करने के लिये कारण भी मिल गया। अर्झव सेनाने अनिशा और खुवान नगर पर आक्रमण किया था। सुप्पिलुलिम ने अर्झवा की सेना का विनाश किया और दोनो नगर मुक्त किये। खत्ती सेना अब अर्झवा में आगे बढी। स्थान स्थान पर अर्झवा की सेना को पराजित करते हुए खत्ती सेनाने अर्झवा की शक्ति तोड दी। अर्झवा नरेश अंझापखद्दू को निष्कासित करके दूसरा शासक नियुक्त किया गया। पश्चिमी सीमा सुरक्षित होतेही अब सुप्पिलुलिम ने सीरिया के अभियान की योजना बनायी। इस अभियान में सबसे बडी रुकावट मितान्नि नरेश दुशरट्ट था।[१८]

अपने पिता के समय सुप्पिलुलिम ने दुशरट्ट के साथ युद्ध किया था। उस युद्ध में सुप्पिलुलिम की हार हुई थी परंतु अब स्थिती बदल गयी थी। मितन्नि राष्ट्र अंतर्गत समस्या के कारण विभाजित हो गया था। मितान्नी नरेश अर्तशुमर की हत्या हो गयी। अर्ततम मितन्नि राज्य का उत्तराधिकारी था। उस के छोटे भाई दुशरट्ट ने अलग राज्य स्थापित किया।

नहरिन और सीरिया

सुप्पिलुलिम ने अर्ततम को अपना समर्थन दिया। दुशरट्ट के डर से अर्ततम ने नहरीन में आश्रय लिया था। अर्ततम का पुत्र शुर्तन और पौत्र इतकाम था। इतकाम किंझा नामक नगर का शासक था। खत्ती नरेश के लिये यह अच्छा अवसर था। अगर नहरीन पर कब्जा हो गया तो मिश्र की सहाय्यता के अभाव में मितन्नि दुर्बल होगा यह उसका कयास था। सुप्पिलुलिम ने अब इशुवा पर आक्रमण करने की योजना बनायी। इशुवा में मितन्नि सेना थी । वह खत्ती सेना के सामने नही टीक सकी। फिर भी इशुवा पर सुप्पिलुलिम ने कब्जा नही किया।

युफ्रेट नदी के पश्चिम तट से वह दक्षिण की ओर मुडा। इस प्रकार खत्ती सेना का सीरिया की तरफ जाना अनपेक्षित था। सीरियायी राज्य जो मितन्नि के अधीन थे उनपर खत्ती सेनाने कब्जा किया। सुप्पिलुलिम की सेना उसी जोश

में आगे बढकर लेबनॉन में घुस गयी। उसने अमरू पर कब्जा किया। दक्षिण सीरिया और लेबनॉन के राज्य मिश्री सत्ता के अधीन थे। दुशरट्ट अब घबरा गया। लेबनॉन के राजपुत्र कभी मिश्र के प्रति स्वामिनिष्ठ नही थे। नहरीन के नगरों के राजपुत्र (शासक) खत्ती आक्रमण से बचनेवाले नही थे। इतकाम की सहायता से सुप्पिलुलिम ने उनपर हमले शुरू किये। फिनिशिया मिश्र की अधिसत्ता मानता था। मिश्री राजदूत फिनिशिया में थे। फिनिशिया के नगर अमोराईट वंशीय राजकुमारों के शासन में थे। अब्दशिर्त ओर उस का पुत्र आझिरू अमोराइट्स के नेता थे।

उन्होने मिश्रके फराओ अखेनतेन को संदेश भेजा की ''मिश्र के साम्राज्य की सुरक्षा के लिये ही हम अन्य नगरों पर शासन स्थापित करना चाहते है।'' मिश्र का फराओ उनके छलावे में आ गया। बिब्लास के शासक रिबद्दा ने अमोराइट्स का स्वामीद्रोह बताकर अखेनतेन को सावध करने का प्रयास किया परंतु अखेनतेन ने उसपर विश्वास नही रखा। सिमीरा मिश्री प्रभाव का प्रमुख केंद्र था। अब्दशिर्त ने सिमीरा पर कब्जा किया। अब मिश्री सत्ता को विद्रोह का स्वरूप ध्यान में आया। अखेनतेन ने अमनप्पा के नेतृत्व में मिश्री सेना भेजी।

सुप्पिलुलिम मिश्री सत्ता से संघर्ष नही चाहता था। परंतु नहरीन पर प्रभुत्व चाहताही था। नहरीन तो मिश्री अधिपत्य में था। दुशरट्ट भी नहरीन पर प्रभुत्व चाहता था। इस प्रकार खत्ती, मितन्नि और मिश्र इन सत्ताओं के संघर्ष का केन्द्र नहरीन था। सुम्पिलुलिम ने युद्धनीति में भी परिवर्तन किया। दक्षिण सीरियासे वह वापस गया। सीरिया के पहले अभियान में कुछ मात्रा में सफलता तो मिली थी। पूरी तैयारी करके उसने दूसरा अभियान शुरू किया।

कादेश का युद्ध

मालाती के पास युफ्रेट नदी पार करके खत्ती सेना नहरीन में आयी। यह मार्ग धोकादायक था। बीच में कई जंगली कबीले थे। उनसे संघर्ष करना पडा। सबसे बडा धोखा अज्जि (हयस) राज्य का था। सुप्पिलुलिम ने उससे मित्रता की संधि की। अज्जि नरेश के साथ अपने बहन का विवाह किया। खत्ती सेना को अब उस ओरसे सुरक्षा प्राप्त हुई। युफ्रेट नदी पार करके खत्ती सेनाने

इशुवा पर अब पूरा नियंत्रण स्थापित किया। मितन्नि नरेश दुशरट्ट को इस ओरसे आक्रमण अनपेक्षित था। मितन्नि की राजधानी वश्शुकन्नी इसी क्षेत्र में थी। खत्ती सेनाने वश्शुकन्नी पर आक्रमण किया। मितन्नि के राजधानी को लुटा। दुशरट्ट प्रतिरोध नही कर सका। अब फिरसे युफ्रेट नदी पार करके खत्ती सेना सीरिया की सीमापर आकर खडी हुई। ओरोंटे नदी के किनारे पर कादेश नगर था। कादेश का राजा मिश्र के अधीन था। कादेश तक के उत्तर सीरिया के सभी राजपुत्रों और संस्थानिकों ने खत्ती सेना का स्वागत किया था। मितन्नि सत्ता के समर्थन के बिना वे दुर्बल थे।अभी भी सुप्पिलुलिम मिश्री सत्ता से संघर्ष टालना चाहता था। परंतु कादेश के राजा ने खत्ती सेना पर धावा बोल दिया।

खत्ती सेना तो विजय के उत्साह में थी । कादेश की सेना उन के सामने नही टीक सकी। कादेश पर खत्ती सेना ने कब्जा किया। सुप्पिलुलिम के लिये अब अच्छा अवसर प्राप्त हो गया था। मितन्नि सत्ता से तो कोई प्रतिरोध नही था और अंतर्गत धार्मिक संघर्ष के कारण मिश्र सीरिया की घटनाओं में हस्तक्षेप करनेकी स्थिती में नही था। खत्ती सेना लेबनान में घुसकर दक्षिण में सीधी अबिना (दमास्कस के पास) तक पहुँची। मिश्र के अधीन राज्य अब खत्ती साम्राज्य के अधीन हुए। नुख्रश्शी (सीरिया) और अमुरु[१९] (लेबनान) के राजाओं के साथ सुप्पिलुलिम ने संधि की। एशिया में मिश्र की सत्ता नही रही। खत्ती राज्य विशाल साम्राज्य में परिवर्तित हुआ।

मितन्नि सत्ता में अंतर्गत संघर्ष चलही रहा था। दुशरट्ट के विरोध में अर्ततम के नेतृत्व में विद्रोह संगठित हुआ। दुशरट्ट की हत्या हुई। विद्रोहियों ने असुरिया नरेश असुर उबालित की सहाय्यता ली थी। विद्रोह के बाद अर्ततम और उस का पुत्र शुतर्न ने असुरिया से संधि किया। इस राजनीति के कारण सुप्पिलुलिम को मितन्नि सत्ता पर नियंत्रण रखने की योजना बनाना आवश्यक हो गया। युफ्रेट नदी पार करनेके स्थान पर कर्केमि एक महत्वपूर्ण स्थान था। कर्केमि पर अधिकार करके वहाँ सुप्पिलुलिमने राजपुत्र पियश्शिल को शासक बनाया। अलेप्पो में राजपुत्र तेलीपिनू को स्थापित किया।

मिश्र और खत्ती राष्ट्र के संबंध

मिश्र की सत्ता उस समय की एक शक्तिशाली सत्ता थी। उस की राष्ट्रीय एवं राजनैतिक परंपरा उस समय दो हजार वर्षों की थी। उसकी तुलना में खत्ती राष्ट्र की परंपरा पांच सौ वर्षों की भी नही थी। फिर भी खत्ती राष्ट्र पश्चिम एशिया की महान सत्ता बन गयी थी। अब मिश्र भी खत्ती साम्राज्य से शत्रुता नही चाहता था। मिश्र का फराओ अख्नेतेन[२०] की मृत्यु हो गयी। उसे पुत्र नही था। उसकी तीसरी कन्या अंख्नेसेनमा ने सुप्पिलुलिम को संदेश भेजा। उसमें अंख्नेसेनमा ने कहा, ''मेरे पति की मृत्यु हो गई है। मैं विधवा का जीवन जी रही हूँ। मेरा पुत्र भी अल्पायु में मुझे छोडकर चला गया। आप के अनेक पुत्र है अगर आप अपने एक पुत्र को भेज देंगे तो मैं उससे विवाह करूंगी। मैं मेरी प्रजामें से किसी को पति बनाना किसी भी हालत में पसंद नही करती।''

सुप्पिलुलिमके लिये यह अच्छा अवसर था। इस पत्र की सच्चाई जानने के लिये उसने अपने राजदूत भेजे। राजदूतों ने मिश्र में जाकर रानी से भेट की और उसका दूसरा पत्र लाया। उसमें रानी ने लिखा था,

''आप मुझपर अविश्वास क्यूं दिखा रहे है ? अगर मुझे पुत्र होता तो क्या परदेसी के सामने मैं मेरे देश की और मेरी वेदना प्रकट करती ? केवल आप के पास संदेश भेजा। सभी कहते है कि आपके अनेक पुत्र है। उनमें से एक मुझे दो जिसे मैं मेरा पति बनाऊंगी''

सुप्पिलुलिम ने फिर अपने एक पुत्र को मिश्र में भेज दिया। परंतु अब विलंब हो गया था। बीच में मिश्र में राज्यक्रांती हुई। एक धर्मगुरू ने अंख्नेसेनमा से विवाह किया और वह मिश्र का फराओ बना। खत्ती राजपुत्र मिश्र में पहुँचतेही उस की हत्या हुई। अगर खत्ती राजपुत्र मिश्र का फराओ बन जाता तो पश्चिम एशिया का इतिहास ही बदल जाता.

खत्ती राष्ट्र और असुरिया संबंध

दुशरट्ट की हत्या के बाद सुप्पिलुलिम ने अर्ततम को मितन्नि नरेश के रूप में अधिकृत मान्यता दी थी। अर्ततम वृद्ध था। उसका पुत्र शुतर्ण वश्शुकनी से शासन कर रहा था। परंतु वह असुरिया के आधीन हो गया था। कभी शौश्यतर (प्रथम मितन्नि नरेश) के समय असुरिया मितन्नि के अधीन

था। असुरिया को पराजित करके शौश्शतर (प्रथम मितन्नि नरेश) के समय असुरिया मितन्नि के अधीन था।असुरिया को पराजित करके शौश्शतर ने उनके राजधानी का सुवर्ण का प्रवेशद्वार बश्शुकन्नी में ला कर वहाँ लगाया था। शुतर्न ने वस्सुकन्नी के राजप्रासाद में लगाया हुआ सुवर्णद्वार असुरिया को वापस कर दिया। मितन्नि की प्रतिष्ठा धूल में मिलाई। राजप्रासाद का वैभव नष्ट हुआ। वैभवसंपन्न भवन उजड गये। दुशरट्ट ने जो संपत्ति शाहीखजाने में इकट्ठी की हुई थी, शुतर्न ने असुरिया को खिराज में दे दी। उसने अपनी राजधानी भी तैते नगर में स्थलांतरित की। अपने विरोधी व्यक्तिओंको पकडकर दण्ड देना शुरू किया।

ऐसी स्थिती में दो सौ रथों के दल का एक प्रमुख अकी तेशुब वहाँ से भाग निकला। उस के साथ दुशरट्ट का एक पुत्र किली तेशुब था। वे बाबिलोन में असुरी सम्राट के पास गये। परंतु असुरी सम्राट ने उनके रथ ले लिये। अपने जीवित को भी यहाँ धोखा है यह देखकर किली तेशुब बाबिलोन से भागकर अनातोलिया में गया। उस समय सुप्पिलुलिम मरस्संतिय नदी के तटपर खत्ती सेना के शिबीर में था। किली तेशुब उसकी शरण में गया। सुप्पिलुलिम ने उसे सहायता देकर कारगमिश के राजा पियश्शिली के पास भेजा।

सुप्पिलुलिम असुरिया की शक्ति पर भी नियंत्रण रखना चाहता था। पियश्शिली और तेशुबने प्रथम शुतर्न के पास शांती का प्रस्ताव भेजा। उसने उत्तर दिया 'अगर आपने आक्रमण किया तो आप के महान राजा के पास वापस कभी नही लौटोगे।' फिर पियश्शिली और तेशुब की खत्ती सेनाने इरिटे पर आक्रमण किया। शुतर्न की सहायता के लिये असुर सेना वश्शुकन्नी में पहुंच गयी। खत्ती सेना ने इरिटे पर कब्जा करके वश्शुकन्नी का मार्ग पकडा। खत्ती सम्राट का शत्रुत्व करने की और खत्ती सेना से टक्कर लेने की हिम्मत असुरी सेना की नही थी। खत्ती सेनाने वश्शुकन्नी पर कब्जा किया और शुतर्न जान बचाकर भाग गया।

सुप्पिलुलिम ने किली तेशुब को अर्ततम का वारिस घोषित किया। किली तेशुब मत्तिवझ नाम धारण करके मितन्नि का राजा हो गया। सुप्पिलुलिम ने अपनी एक कन्या का विवाह उससे कराकर उसे अपने परिवार का सदस्य बनाया। मितन्नि राष्ट्र की पहचान समाप्त होकर वह खत्ती राष्ट्र के अंकित भूमि हो गयी।

विशाल खत्ती साम्राज्यपर नियंत्रण रखने के लिये सुप्पिलुलिम को निरंतर संघर्षरत रहना पडा। उसने अभी तक जो भी अभियान किये थे उसी प्रकार से अभियान फिरसे भी करने पडे। कस्की टोलियों के साथ युद्ध करके उन का उपद्रव नियंत्रण में रखना आवश्यक था। सुप्पिलुलिमने योजनाबद्ध अभियान करके उनको पराजित किया। उन के पहाडी उपनिवेश नष्ट किये। अर्झवा और अहियवन इन पर अंकुश रखने के लिये अर्झवा में खत्ती सेना रखी थी। उत्तर में इष्टहर, तेशिट, तुपिलिश, तिकुकुवा, तिशिन और इलुरिय पर्वतीय प्रदेश पर खत्ती शासन स्थापित किया जो उस दिशा में की हुई अलग मुहीम थी। उत्तर पश्चिम में कश्शु पर्वत तक का भूप्रदेश भी खत्ती साम्राज्य में समाविष्ट हुआ।

सबसे महत्वपूर्ण बात थी नहरिन और सीरिया के राज्योंपर नियंत्रण रखने की। विशेषतः सीरिया में बार बार विद्रोह होते थे। कुछ राज्य खत्ती अधीनता में रहते हुए भी उनका झुकाव मिश्री अधीनता की ओर था। मिश्र की विधवा रानी अंखसेनमा की प्रार्थना पर जब खत्ती राजपुत्र झन्नंझ को मिश्र में भेजा तब उस की हत्या की गयी थी। सुप्पिलुलिम और खत्ती प्रतिष्ठापर यह गहरी चोट थी। मिश्र और खत्ती राष्ट्र के संबंध इस कारण तनावपूर्ण हो गये थे। आनेवाली चार पीढीयों तक यह तनाव रहा।

अम्का (सीरिया) से खत्ती सेना वापस आयी तब मिश्र के बंदी उनके साथ थे। इन बंदियों ने अपने साथ प्लेग जैसी भयंकर बीमारी खत्तीनगर में लायी। इस बीमारी ने महान सम्राट सुप्पिलुलिम को भी पकडा। उसी से उस की मृत्यु हो गयी।

अर्नुवन्द (द्वितीय) १३४०-३९

सुप्पिलुलिम के पश्चात उसके पुत्र अर्नुवन्द (द्वितीय) को राज्यपद प्राप्त हुआ। अर्नुवन्द अपने पिता के साथ अनेक बार अभियान पर गया था। युद्ध में भी उसने अपनी योग्यता सिद्ध की थी। प्रशासन का भी अनुभव लिया था। परंतु जिस बीमारी से उसके पिता की मृत्यु हो गयी थी उसी बीमारी ने वर्ष के अंदर ही उसकी मृत्यु हो गई। उसके बीमारी की वार्ता जैसे फैली वैसे अनेक स्थानपर विद्रोह प्रारंभ हुए। साम्राज्य के लिये गंभीर समस्याएँ खडी हुई।

मुर्शिली (द्वितीय) १३३९-१३०६

अनुर्वंद की मृत्यु हुई तब मुर्शिली (सुप्पिलुलिम और तवन्नना का पुत्र) आयु में छोटा था। किशोरावस्था में था। 'अब तो राजा बच्चा है' इस प्रकार की भावना फैल गयी थी। अनेक अधीन राज्य इस अवसर का लाभ उठाने के प्रयास में थे। संभवतः मुर्शिली के मंत्री एवं उसके पिता के समय के स्वामिनिष्ठ अधिकारी अच्छे थे। अनुभवी थे। सीरिया में पियश्शिली (शर्रू कुसख) होने के कारण तुरंत कोई धोखा नही था। परंतु उत्तर में कस्की और पश्चिम में अर्झवा इन के कारण अनेक स्थानपर विद्रोह खडे हुए। सभी शत्रुओंसे एकही समय पर संघर्ष करना असंभव था। अधिक समस्याएँ खडी ना हो इस दृष्टि से जितनी हो उतनी 'जैसे थे' परिस्थिती रखने की नीति निश्चित की गयी।

सीरिया में असुरिया से उपद्रव की संभावना थी। असुर नरेश उबालित कारगमिश पर आक्रमण करेगा यह ध्यान में लेकर मुर्शिली ने नुवांझा के नेतृत्व में कारगमिश को रथदल और खत्ती सेना भेज दी। असुरनरेश को खत्ती सेना आने की खबर मिली तो उसकी आक्रमण करने की हिम्मत नही हुई। प्रथम उत्तर से बार बार होनेवाले कस्की हमले रोकने की आवश्यकता थी। राज्य पर आते ही मुर्शिली को उत्तर की ओर अभियानपर निकलना पडा। कस्की संगठित हुए थे। अनेक नगरों पर कब्जा करके बैठे थे। मुर्शिली ने कठोरतासे कस्कीओं के उपद्रव का दमन किया। अपने राज्य काल में उसके बाद भी दस बार कस्कीयों के विरुद्ध मुर्शिली को खत्ती सेना भेजनी पडी। पिख्युनिय नामक कस्की नेताने एक बार कस्की कबीलों का संगठन करके कस्की राज्य की स्थापना की। मुर्शिली ने स्वयं उस समय कस्की राजा और उसकी राजधानी को नष्ट किया।

मुर्शिली के दूसरे राज्यवर्ष में अर्झवा में अनेक स्थानपर विद्रोह शुरू हो गये। अर्झवा के नेतृत्व में अहियवन और मिल्लवंद के राजा, मिर कुवलिय और खपल्ल के शासक, खत्ती नरेश की कृपासे बने हुए मनप तर्खुत जैसे शासक इन सभी ने खत्ती अधीनता अस्वीकार की। खिराज भेजना बंद किया। अपनी सेना के पथक खत्ती सेना के साथ अभियानपर भेजना बंद किया। सभी समझ रहे थे की यह बच्चा अब अपना कुछ बिघाड नही सकता। परंतु यह उन की भूल थी उत्तर के अभियान में व्यस्त होने के कारण मुर्शिली पश्चिम सीमापर तुरन्त नही जा सका। उसने गुल्ल और मल्लझिती इन सेनानीयों को भेज दिया। उन्होंने

मिल्लवंद पर हमला करके वहाँ के विद्रोहीयों को पराजित किया। शासक भाग गया। ख़त्ती सेनाने मिल्लवद पर कब्जा किया।

अब मुर्शिली अर्झवा के अभियान पर निकला । खल्लप को पहुँचतेही कारगमिश से पियश्शिली अपनी सेना के साथ आकर उसे मिला। वल्मा नगर के पास अष्टार्प नदी के तट पर ख़त्ती सेना पहुंची। अर्झव नरेश उख्ख़शिती ने अपने पुत्र पियम कुरूंत को युद्ध में उतारा। वह स्वयं राजधानी में रहा। संभवतः आपश राजधानी थी। वह इजियन सागर के तट पर था। युद्ध में अर्झवा की सेना पराजित होकर भाग गयी। आपश तक ख़त्ती सेनाने उसका पीछा किया। उख्ख़शिती अपने अनुयायियों के साथ जलमार्ग से भाग गया। वह फिर कभी वापस नही आया। पियम कुरूंत भाग कर अहियवन के पास आश्रय के लिये चला गया। अर्झवा की सेनाका एक भाग अरिन्नंद पर्वत की ओर भाग गया था। उर्वरित सेना ने पुरंद नगर में आश्रय लिया। युद्ध का मौसम समाप्त हो रहा था। हिमवर्षाव कभी भी प्रारंभ हो सकता था। फिर भी मुर्शिली ने अरिन्नंद पर्वत की ओर प्रयाण किया। वहाँ रथदल का उपयोग नही था। ख़त्ती सेनाने पर्वतोंपर चढकर शत्रुसेना को घेर लिया। अंतिमतः भूख़ और प्यास से तडपती शत्रुसेना शरण आयी। उसके बाद ख़त्ती सेनाने पुरंद नगर को भी घेरा डाला। परंतु अब हिमवर्षाव प्रारंभ हो गया था। मुर्शिली अष्टार्प नदी के प्रदेश में वापस आया। वहाँ के एक दुर्ग में हेमंत ऋतु उसने बिताया। वही पर हेमंत ऋतु में आनेवाला ख़त्ती उत्सव मनाया गया। अनुकुल स्थिती होते ही मुर्शिली ने पुरंद नगर जीतकर उसपर अधिकार किया।

अर्झवा अब पूरी तरह से मुर्शिली के नियंत्रण में आ गया। जिसका मजाक उडाया जाता था उस बच्चे राजाने ख़त्ती साम्राज्य के सबसे धोकादायक और बडे शत्रु को तहस नहस कर डाला था। मुर्शिली ने अर्झवा को तीन राज्यों में विभाजित करके तीन अलग ख़त्ती शासक नियुक्त किये। वायव्य सीमापर विलुशा का राज्य था। उसका राजा अलक्संदु था। उस के साथ करार करके उसे ख़त्ती साम्राज्य के अधीन किया।

ख़त्ती राष्ट्र की ईशान्य दिशा में अज्जि और हयस ये दो राज्य थे। अज्जि मित्रराज्य था। परंतु हयस के साथ अज्जि ने अपनी स्वतंत्रता घोषित की। इस समय मुर्शिली कुम्मनि में धार्मिक कार्य में व्यस्त था। मुर्शिली ने एक

सेनापति को विद्रोह का शमन करने के लिये भेज दिया। इसी समय सीरिया में विद्रोह हुआ। कारगमिश (कर्केमि) में मुर्शिली का भाई पियाश्शिली ही राजा था। वह भी कुम्मन्नि में उत्सव के लिये गया था। उसके पीछे कारगमिश में भी विद्रोह हुआ । ख़त्ती सेना को वहाँ से ख़देड दिया गया। ये घटनाएँ गंभीर थी। दुर्भाग्य से कुम्मान्नि में पियश्शिली बीमार पडा और उसकी मृत्यु हो गयी। मुर्शिली के लिये यह बहुत बडा आघात था। पियश्शिली के कारण नहरीन और नुख़श्शी का ख़त्ती साम्राज्य सुरक्षित था। मिश्र और असुरिया राष्ट्र के तनावपूर्ण संबंधोंको पियश्शिलीही संभालता था। स्वयं मुर्शिलीने सीरिया का अभियान शुरू किया। सारे विद्रोह समाप्त करके कारगमिश में उसने पियश्शिली के पुत्र शख़ुरूनुवा को राजपद दिया। मुर्शिली को भी निरंतर युद्ध करने पडे। अपने पीछे उसने विशाल और स्थिर साम्राज्य छोडा। प्रशासन में भी स्वामिनिष्ठ और कार्यक्षम शासकों की नियुक्ति की। सुप्पिलुलिम ने जो महान प्रतिष्ठा ख़त्ती राष्ट्र को प्राप्त करा दी थी उसे कायम रख़ा।

मुवतल्ली (द्वितीय) १३०६-१२८२

मुर्शिली के पश्चात उसका पुत्र मुवतल्ली को राज्यपद प्राप्त हुआ। राज्यकाल के प्रारंभ में कोई गंभीर समस्या नही थी। अर्झवा के साथ जो करार किये गये थे उनका नूतनीकरण किया गया। इजियन और मर्मरा सागर के किनारे विलुशा में अलक्षेंदु राजा था। विलुशा के दक्षिण में सेहा नदी के भूप्रदेश में मनप तर्खुत शासक था। मिर और कुवलिय में कुपन्त कुरून्त शासक था। ख़पल्ल में उर ख़त्तुश शासक था।

पश्चिम में मिर और कुवलिय में अर्झव प्रजा ने विद्रोह किया। विलुशा पर भी विद्रोहीयों ने आक्रमण किया। अलक्षेंदु ने सहायता की याचना की। मुवतल्ली ने ख़त्ती सेना सहायता के लिये भेजी। अलक्षुन्दु के साथ एक नया संधि किया। इस संधि के अनुसार मुवतल्ली के अभियान में विलुशा की सेना भेजना बंधनकारक था। अभी तक मितन्नि एक राष्ट्र के रूप में अस्तित्व में था। सुपिलुलिम के समय शत्तुअर को मितन्नि का राजपद दिया गया था। परंतु असुर नरेश अदद निरारी (प्रथम) ने मितन्नि पर आक्रमण करके उसे अपने अधीन किया था। शत्तुअर के बाद उसके पुत्र वाससत्त ने असुरी अधीनता को

ठुकरा दिया। असुर सेनाने मितन्नि पर आक्रमण किया। ख़त्ती सेना सहायत्ता के लिये नही आयी । अदद निरारी ने मितन्नि को पूरी तरह नष्ट किया। पश्चिम एशिया की एक समर्थ सत्ता सदा के लिये अदृश्य हो गयी।

उत्तरी सीमा पर कस्कीयों का आक्रमण ख़त्ती साम्राज्य के लिये हमेशा धोकादायक रहता था। मुवतल्ली ने ख़त्तीशील को लष्कर प्रमुख बनाकर उत्तर क्षेत्र में भेज दिया। ख़त्तीशील मुवतल्ली का भाई था और शौश्गा का धर्मगुरू था। समुह के उत्तरमें पित्तेयारिका नगर में ख़त्तीशील का केंद्र था। मुवतल्लीने उसे पर्याप्त सेना नही दी थी। फिर भी उसने शत्रु को बंदी बनाकर राजधानी में भेज दिया। मुवतल्ली ने उसे शाही अंग रक्षकों के दल का प्रमुख पद देकर सम्मानित किया। साम्राज्य में यह महत्वपूर्ण पद था। उसे नेरिक के वायुदेव का भी धर्मगुरू बनाया। समुह, पित्तेयारिका, ख़पिश, इष्टहर, तरन्हा, ख़त्तिन और ख़न्नान का प्रदेश उसके अधिकार में आ गया। यह प्रदेश कस्कीयों की सीमापर था।

पश्चिम एशिया की राजनीति ने इस काल में आंतरराष्ट्रीय संघर्ष के युग में प्रवेश किया। मितन्नि राष्ट्र को नष्ट करके असुरिया प्रबल हो गया था। महत्वाकांक्षी असुर नरेश से ख़त्ती साम्राज्य के सीरियायी राज्यों को धोका था। ख़त्ती और असुरिया के संबंध तनावपूर्ण हो गये। केवल आर्थिक दृष्टि से दोनो राष्ट्रों के लिये व्यापार आवश्यक था इसलिये तुरंत संघर्ष नही हुआ।

मिश्र के साथ भी संबंध तनावपूर्ण थे परंतु अब तक मिश्र का हस्तक्षेप सीमित था। परंतु १९ वे राजवंश का फराओ राज्य पर आया तब स्थिती बदल गयी। सेथो महत्वाकांक्षी था। उसने सीरिया पर आक्रमण किया। उत्तर सीरिया में ख़त्ती राष्ट्र के अधीन राज्य थे। ओरोंटो नदी तक मिश्र की सेना पहुँची। मिश्री सेनाने कादेश पर कब्जा किया। फिर भी पॅलेस्टाईन और फिनिशिया पर मिश्री सत्ता का और उत्तर सीरियापर ख़त्ती सत्ता का अधिकार रहा। १२९० में राम द्वितीय फराओ बना। वह महत्वाकांक्षी तो था ही। अहंकारी और आक्रमक स्वभाव का था। उसने फिनिशिया में जाकर बैरूत के उत्तर में सीमादर्शक अभिलेख स्तंभ खडा किया था।

मुवतल्ली ने मिश्र की यह सोची समझी पहल देखकर अपने सभी अधीन राज्यों के शासकों को अपनी सेना सज्ज करने की सूचना दी। कटवदन, युफ्रेट नदी पर कर्केमि (कारगमिश), ओरोंटे नदी पर कादेश, अलेप्पो, नुख़श्शी और

नहरीन के सभी शासक इनको संघटित प्रतिकार की राजाज्ञा भेजी गयी। अस्वाद के फिनिशिअन्स, उगारित और केडी के शासक मिश्र को प्रतिवर्ष ख़िराज भेजते थें परंतु मिश्र के प्रति उनकी निष्ठा नही थी। उन्होंने ख़त्ती सत्ता के साथ रहना पसंद किया। पेदास, अरिन्त, लायसिया, मायसिया, दरद, कालकीश और मुशंत (सिलिशिया) ख़त्ती सेना का साथ देने निकले।

कादेश का युद्ध

मुवतल्ली जानता था की मिश्र की सेना ओरोंटे की घाटी में कादेश से आगे बढेगी। मिश्र की सेना में निग्रो सैनिकों के पथक भी थे। मिश्र की सेना के पथक अलग अलग आमेन, रा, प्ताः सुत्तेख़ आदि देवताओं के ध्वज लेकर प्रस्थान करते हुए फिनिशिया के पर्वतों की घाटियों से ओरोंटे नदी की ओर आ गये। मिश्री आक्रमण का सही अंदाज लगाकर मुवतल्ली ने ओरोंटे नदी के क्षेत्र में ही अपनी सेना के शिबीर ख़डे किये थे। मुवतल्ली ने कुछ ऐसे गुप्तचर भेजे जो मिश्री सेना द्वारा पकडे गये। उनके पास ऐसे संदेश और जानकारी थी जिसपर विश्वास करके मिश्री नरेश राम (द्वितीय) ने अपनी योजना बदल दी। पकडे गये गुप्तचरों से प्राप्त जानकारी यह थी की ख़त्ती नरेश अभी अलेप्पो में ही है।

मिश्री नरेश राम साहसी था। ख़त्ती नरेश अलेप्पो में है यह सुनतेही केवल अपना सेना पथक साथ में लेकर वह कादेश की ओर मुडा। ख़त्ती सेना कादेश के दुर्ग के उत्तर में आकर छिपी हुई थी। मिश्र की बाकी सेना दक्षिण दिशा से कादेश की ओर बढ रही थी। दो पंक्तिओं मे बढ रहे ये सेनापथक असावध थे। उनको पीछे छोडकर राम अपना रथदल लेकर कादेश के पास सुरक्षा व्युह में खडी ख़त्ती सेनापर टूट पडा। परंतु यह तो ख़त्ती सेना का दाहिनी ओर का एक हिस्सा था। ख़त्ती सेनाने राम के रथदल को घेर लिया। तब तक दुर्ग के उत्तर में छिपी हुई ख़त्ती सेना असावध मिश्री सेना पर टूट पडी। अपने पीछे क्या हो रहा है इसकी राम को ख़बर नही थी। जब उसके यह ध्यान में आया तब तक वह पलटकर अपनी सेनासे मिलने हेतु संघर्ष करते हुए निकल पडा। ख़त्ती रथदल को चीरते हुए निकलना आसान नही था। 'रा' का ध्वज धारण करनेवाले उसके सेनापथक का प्रमुख और बचे हुए सैनिकों ने बडी कठिनाई से राम को ख़त्ती सेना के घेरे से बाहर निकाला।

अब मिश्री सेना सावध और संघटित हो कर खत्ती सेनापर टूट पडी। स्वयं राम रणक्षेत्र में मिश्री सेना में चेतना जाग रहा था। मुवतल्ली रणक्षेत्र में नही था। कुशल सेनानी होते हुए भी ओरोंटे नदी के दूसरे तटपर वह युद्ध के निर्णय की प्रतीक्षा में था। खत्ती सेना कडा प्रतिकार कर रही थी।[२२] फिर भी उनके कई नायक और सैनिक मारे गये। भयंकर युद्ध हुआ। अंतिमतः खत्ती सेनाने पीछे हकर ओरोंटे नदी पार करके मोर्चा लिया। मिश्री सेना तो विजयी हुई थी। परंतु पीछा करके फिरसे युद्ध करनेकी स्थिति मिश्री सेना की भी नही रही थी। यह युद्ध दो महासत्ताओं में हुआ। एक उत्तर आफ्रिका में स्थित मिश्र की महासत्ता थी तो दूसरी पश्चिम एशिया स्थित महासत्ता थी। युद्ध के पश्चात बची हुई सेना लेकर दोनो सम्राट अपने राजधानी की ओर चले गये।

मुवतल्ली इस युद्ध से समाधानी नही था। युद्ध के पश्चात दो ही वर्ष में उसने खत्ती सेना खडी की खत्ती साम्राज्य का नहरीन और नुखश्शी (उत्तर सीरिया) पर का अधिकार यह साम्राज्य की प्रतिष्ठा और सार्वभौमत्व का विषय था। जब मिश्री नरेश के सेवक मिश्र के मंदिरों में उन के विजय के अभिलेख उत्कीर्ण कर रहे थे तब खत्ती सेना अभियान के लिये सुसज्ज हो रही थी। दो सत्ताओं का यह संघर्ष लगभग आठ वर्ष चलता रहा। अंतिमतः नहरीन पर और दक्षिण में अमुरु (लेबनान) तक खत्ती साम्राज्य का अधिकार स्थापित हुआ। फिनिशिया और पॅलेस्टाईनपर मिश्री अधिपत्य रहा।

मुर्शिली तृतीय (उन्ही तेशुब) १२८२-१२७५

मुवतल्ली के मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र उन्ही तेशुब राज्य पर आया।[२३] उन्ही तेशुब की क्षमता मर्यादीत थी। उसे अपने चाचा खत्तीशील का डर लगता था। खत्ती साम्राज्य के ईशान्य में खत्तीशील शासक था। मुवतल्ली ने ही उसे उच्च पद पर स्थापित किया था। उन्ही तेशुब ने खत्तीशील के अधिकार कम किये। उस के राज्यों मे जो शासक थे उनके स्थानपर दूसरे शासक नियुक्त किये। खत्तीशील की सत्ता दुर्बल करना यह उसका उद्देश्य था। जब राज्यपर आया तब उन्ही तेशुब को खत्तीशील ने अपना समर्थन दिया था। परंतु उन्ही तेशुब उसे उसके राजपद का प्रतिस्पर्धी समझता रहा। नेरिक के वायुदेवता का

खत्तीशील धर्मगुरु था। उसे धर्मगुरु पद से हटाकर नेरिक पर भी अलग शासक की नियुक्ति की गई।

उन्ही तेशुब ने एक ही अच्छा काम किया। मुवतल्ली ने खत्तीनगर से राजधानी दक्षिण में स्थलांतरित की थी जिससे सभी नाराज थे। उन्ही तेशुब ने फिरसे खत्तीनगर को राजधानी बनाया। सात वर्ष उन्ही तेशुब राज्यपर रहा। खत्तीशील ने फिर राज्यक्रांती की और खत्तीशील खत्ती सम्राट बन गया।

खत्तीशील (तृतीय) १२७५-१२५०

खत्तीशील ने राज्यक्रांती करके राजपद प्राप्त किया। परंतु इस राज्यक्रांती में हत्याएँ नही हुई। खत्तीशील का खत्तीओं ने राजा के रूप में स्वीकार किया। जिन्होंने विरोध किया उनको केवल निष्कासित किया गया। उन्ही तेशुब को खत्तीशील ने बार बार पत्र लिखकर उसे उसपर अन्याय करनेसे परावृत्त करने का प्रयास किया था। राज्यक्रांती के बाद उसको निष्कासित कर दिया। अपने कृति के समर्थन में उसने लिखित रूपमें प्रमाण अपने पीछे छोडे है। एक दृष्टि से वह उसका आत्मचरित्र है। प्रारंभ में लबर्न खत्तीशील ने कहा–

''मैं महान राजा, खत्ती नरेश, महान मुर्शिली का पुत्र, महाराज सुप्पिलुलिम का पौत्र, कुश्शर नरेश खत्तीशील के वंश में उत्पन्न–इश्तार की दैवी शक्ति को स्पष्ट करता हूँ। सभी उसे सुने। भविष्य में भी इसपर श्रद्धा रखे। मेरा पुत्र, पोता और स्वयं मुझमें जो सर्वश्रेष्ठता होगी वह देवताओं में श्रेष्ठ इश्तार देवी की कृपा है।'

इसके पश्चात अपने बचपन का जीवन, जिस में अस्वास्थ्य के कारण जो कष्ट हुए उसका वर्णन है। इश्तार देवी की कृपा से वह स्वस्थ हुआ। मत्सरग्रस्त शत्रुओं से वह घिरा हुआ था। देवी का भक्त होने के कारण उसकी कृपा से उन शत्रुओंको परास्त करने में वह सफल हुआ। जब उत्तर के प्रांत का राज्यपाल पद उसे प्राप्त हुआ तब देवी इश्तार का आशीर्वाद हर संकट में उसे मिलता रहा।

आगे खत्तीशील लिखता है–

''मेरे मनमें मेरे भाई के प्रति सम्मान था। स्वामी निष्ठा थी। इसी कारण केवल स्वार्थ से प्रेरित हो कर मैने कोई भी कदम नही उठाया। सात वर्षों तक

राजाज्ञा का पालन किया। परंतु राजा ने हपिश्य और नेरिक्क प्रांतों का मेरा अधिकार छीन कर मुझे नष्ट करने का प्रयास किया। मैंने उसका अनुरोध नही किया। विद्रोह किया। वह भी छद्म पद्धति से छल कपट के भाव से नही किया। मैंने सरलता से युद्ध घोषित किया। मैंने उसे कहा, झगडा तो आपने शुरू किया आप तो महाराज है जब की केवल एक दुर्ग आपने मेरे पास छोडा जिसका मैं शासक हूँ। अब तो समुह की देवी इश्तार, नेरिक का देवता वायुदेव ही इसका न्याय करेंगे। अगर कोई मुझे पूछे की अगर ऐसाही है तो पहले तुमने उसे क्यूं राजपद दिया और अब युद्ध करने पर क्यूं तुले हो ? तो मै कहता हूं, अगर उसने मुझसे शत्रुता नही की होती तो ईश्वर की कृपा से वह महान राजा बन जाता। अब यह ईश्वर का ही न्याय है की वह राजपद खो बैठा।

इश्तार देवी ने इसके पहले ही मुझे राजपद देने का वचन दिया था। और फिर मेरी पत्नी को सपने में साक्षात्कार देकर कहा की वह मेरी सहायता करेगी और पूरे खत्ती राष्ट्र का समर्थन मुझे प्राप्त होगा। सच में देवी की कृपा मुझे प्राप्त हुई। उन्ही तेशुब पर उसकी अवकृपा हुई।[२४]

खत्तीशील का यह महत्वपूर्ण दस्तावेज उसके कृति का तर्कशुद्ध समर्थन करनेवाला है। समुहा (मालाती) में देवी इश्तार का मंदिर था खत्तीशील की वह कुलस्वामिनी थी। मालाती में कुछ सुंदर भवन बनवाकर उसने देवी को अर्पण किये। खत्ती नगर में भी नये प्रासादो, भवनों का निर्माण किया। खत्तीशील का विवाह किझुवत्न के धर्मगुरू की कन्या पदुखेपा के साथ हुआ था। रानी पदुखेपा कुशल प्रशासक थी। खत्तीशील और पदुखेपा के संयुक्त प्रशासकीय एवं धार्मिक शासनपत्र उपलब्ध हुए है।

खत्तीशील शांतता चाहता था। लगभग पंद्रह वर्षों के युद्ध का आर्थिक समृद्धि पर भी प्रतिकुल असर पडा था। इतने प्रदीर्घ संघर्ष से ना खत्ती साम्राज्य को कोई लाभ हुआ ना मिश्र के साम्राज्य को। मुवतल्ली ने कमी शांतता के लिये प्रयास नही किया। अमरू के शासक मिश्र के अनुकूल रहते थे। वहाँ के शासक पुतखी को हटाकर मुवतल्ली ने शबिली को नियुक्त किया था। पुतखी को बंदी बनाकर खत्ती साम्राज्य के एक दूरस्थ स्थानपर रखा था। खत्तीशील ने उस समय अपने भाई से उसे माँगकर अपने एक दुर्ग में सम्मानित राजकीय बंदी के समान रखा था।

राज्यपद पर आने के बाद खत्तीशील ने पुतखी को अमुरू के शासक के नाते फिरसे स्थापित किया। मिश्र नरेश राम के लिये यह अनुकूल घटना थी। मिश्र और खत्ती राष्ट्र के राजनैतिक संबंधों में सुधार करनेकी दृष्टी से यह पहला कदम था। इस घटना के पश्चात दोनो सत्ताओं के राजदूतों के माध्यम से संवाद शुरू हो गया। परिणाम यह निकला की दोनो सत्ताओं में संधि हो गयी। प्राचीन काल का यह इतिहास प्रसिद्ध करार है।

कर्नाक के मंदिर के दीवारपर कीलाक्षर लिपि में मिश्र में और बोधाजकुई के अभिलेखागार में मिट्टी की पटियाँ पर अनातोलिया में यह मूल संधि पत्र प्राप्त हुआ है। मिश्र और खत्ती राष्ट्र में यह तीसरा करार था। दोनो पक्ष अब समान प्रतिष्ठा के थे। खत्ती नरेश को खेत का महान नेता कहा है। फराओ राम को मिश्र का महान राजपुत्र कहा है। सुप्पिलुलिम और मुर्शिली के काल में जो करार हुए उसका उल्लेख करते हुए आगे परस्पर सुरक्षा के लिये अभिवचन देनेवाले नियमों का परिच्छेद है। किसी के भी साम्राज्य के अंतर्गत या अधीन राज्यों में अगर विद्रोह हुआ तो उस विद्रोह को समर्थन नही देंगे, विद्रोही राजकुमारोंको, शासकों को अपने देश में आश्रय नही देंगे, अन्य राष्ट्र अगर दोनों में से किसी पर आक्रमण करेगा तो संयुक्त रूप में आक्रमण का प्रतिरोध करेंगे इस प्रकार के अभिवचन संधि पत्र में समाविष्ट थे।

मिश्र और खत्ती के एक सहस्र देवताओं की साक्ष (शपथ) इस संधि पत्र में समाविष्ट की गयी। जो इस नियमों को भंग करेगा उसका इन देवताओं द्वारा सर्वनाश होगा। इस अर्थ के शापवचन से संधि पत्र पूर्ण होता था। संधि पत्र तैयार होने की प्रक्रिया सीरिया में हुई। मिश्र के राजनैतिक प्रतिनिधी के हाथ में खत्ती प्रतिनिधी तार्तिसिवू ने चांदी की पटियापर चित्र लिपि एवं कीलाक्षर लिपि में खुदा हुआ संधिपत्र दिया । मिश्र के फराओ को वह भेट किया गया। खत्ती महारानी पदुखिपा को मिश्र की महारानी नेफेरतारी से अभिनंदन पत्र प्राप्त हुआ। खत्ती महारानी ने भी उसे पत्र भेजा।[२५]

यह संधि होने के पश्चात खत्तीशील ने पुतखी के साथ भी अलग संधि किया। अमरू जो कभी मिश्र के अनुकूल देश था वह खत्ती साम्राज्य को अनुकूल हो गया। पुतखी बंदी था तब खत्तीशील ही उसका पालक था। पुतखी की कन्या का विवाह खत्ती राजकुमार नेरिगा शाम से हुआ। खत्तीशील की कन्या

गशुलिया अमरू की महारानी बनकर पुतखी के प्रासाद में गयी। [२६] अब इजियन सागर से फारस की खाडी तक खत्ती साम्राज्य फैल गया।

खत्ती नरेश की मिश्र यात्रा

और एक ऐतिहासिक घटना महत्वपूर्ण हुई। उस काल में एक शक्तिशाली राष्ट्र के प्रमुख ने दूसरे शक्तिशाली राष्ट्र की सदिच्छा यात्रा की ऐसे उदाहरण अपवाद स्वरूप ही दिखाई देते है। केवल युद्धभूमि पर ही आमने सामने आते थे। संधि के पश्चात तेरह वे वर्ष में खत्तुशील ने महारानी पदुखिपा और परिवार के साथ मिश्र की यात्रा की । खत्ती साम्राज्य के अनेक अंकित राजा खत्ती नरेश के साथ थे। केदी, अर्झवा, अमरू के नरेश भी बहुमूल्य उपहार लेकर इस यात्रा में सम्मीलित हुए थे। मिश्र में सभी का बहुत अच्छा स्वागत और सन्मान हुआ। खत्तीशील और पदुखिपा की कन्या का विवाद मिश्र नरेश के साथ हुआ। उरेत मात नेफेरु रा (सूर्य देवता समान सुंदर राजकुमारी) यह सन्मानदर्शक मिश्री नाम उसे मिला।

मिश्र की राजधानी थिब्ज थी। थिब्ज में खोन्सू देवता का मंदिर था। खोन्सू अमेन और मट का पुत्र था। भूत प्रेत पिशाच्च की बाधाओ से मुक्त होने के लिये खोन्सू की उपासना प्रचलित थी। जब खत्तुशील की दूसरी कन्या बिंत्रेश असाध्य रोग से ग्रस्त हुई तब मिश्री नरेश ने खोन्सू की मूर्ति और उसके दो पुरोहीत खत्ती नगर में भेजे। उसके पहले मिश्री नरेश ने थुतिम खेब नामक मिश्री तत्त्ववेत्ता को वहाँ भेजा था। वह वैद्य भी था परंतु खत्ती राजकुमारी को स्वस्थ नही कर सका था। राजकुमारी को सैतान की बाधा हुई थी। खोन्सू देवता की कृपासे वह मुक्त हुई। [२७] मिश्र की यात्रा के पश्चात अल्प काल में ही खत्तीशील की मृत्यु हुई।

तुधलीय चतुर्थ - १२५०-१२२०

खत्तीशील और पदुखेपा का पुत्र तुधलीय खत्तीशील के पश्चात उसका उत्तराधिकारी बना। उस समय एक विशाल साम्राज्य उसके हाथ में आया था। वह स्वयं धार्मिक प्रवृत्ति का था। याजिलिकया के शिल्पों का निर्माण उस के काल में हुआ। दो स्थानपर तुधलीय के शिल्प है। एक में वह अपने राजचिन्ह के

साथ दिखाया गया है तो दूसरे में वह ईश्वर के आलिंगन में दिखाया गया है। याजिलिकया का मंदिर परिसर खत्ती कला का अद्भूत आविष्कार था।

खत्ती साम्राज्य की धाक अभी भी थी परंतु असुरिया भी पश्चिम एशिया की शक्तिशाली सत्ता हो गयी थी। असुर वीरता के साथ क्रूरता के लिये प्रसिद्ध थे। महत्वाकांक्षी थे। खत्तीशील के समय उसने बाबिलोन के साथ अच्छे संबंध रखे थे। असुर नरेश शाल्मनेसेर ने बाबिलोन पर आक्रमण किया अपने पुत्र तुकुल्ती एनुर्त को बाबिलोन का शासक नियुक्त किया। खत्ती सत्ता ने उस में हस्तक्षेप नही किया। असुरिया ने एलाम पर आक्रमण करके उसपर भी कब्जा किया।

महत्वाकांक्षी असुरनरेश को खत्ती सम्राट की दुर्बलता ध्यानमें आ रही थी। मितन्नि राष्ट्र नष्ट करतेही असुरिया खत्ती राष्ट्र के सीमा पर आ गया था। इशुवा पर असुर सेनाने कब्जा किया था। अधीन राज्यों पर का खत्ती नरेश का नियंत्रण शिथिल हो गया था। तुधलीय ने असुरिया के विरुद्ध युद्ध घोषित दिया। परंतु खत्ती सेना पराजित हुई। नहरीन पर खत्ती सत्ता थी। परंतु असुरियाने वहाँ भी छापामारी शुरू की। फिर भी उत्तर सीरिया में किसी भी राज्य पर असुर कब्जा नही कर सके। असुरिया के आक्रमण से खत्ती राष्ट्र का ज्यादा नुकसान तो नही हुआ परंतु खत्ती राष्ट्र के प्रतिष्ठा पर चोट लगी थी। ऐसे स्थिती में निश्चयात्मक राष्ट्रीय धोरण की आवश्यकता थी। असुरिया पर आक्रमण करके उस की शक्ति तोडने की इच्छाशक्ति ओर साहस तुधलीय में नही था। तुधलीय का बाकी राज्यकाल आम तौरपर शांतता और समृद्धि का रहा परंतु उसी में खत्ती राष्ट्र के विनाश के बीज दिखाई दे रहे थे।

अर्नुवन्द (तृतीय)

तुधलीय और महारानी तवाशी का पुत्र अर्नुवंद तुधलीय के पश्चात राजपद पर आया। बोधाज कुई में प्राप्त पटिया पर अपनी माँ के साथ उसका उल्लेख आता है। खत्ती राजवंश में पत्नी और राजमाता की कडी प्रतिष्ठा थी। तुधलीय की माँ पदुखिपा भी राजमाता के नाते शासन में उस की मदद करती थी। वह कटवदन राज्य की वारिस थी। मिश्र और खत्ती राष्ट्र के संधि पत्र में उसे 'खेत की महान रानी, कटवदन की भूमि पुत्री, खेत की स्वामीनी और देवी माँ की

सख्री' इस प्रकार गौरवपूर्ण अभिधान से संबोधित किया है। अर्नुवन्द के साथ उसकी पत्नी मुनीदन अर्थात् महारानी का भी उल्लेख पटियाँ पर आता है।

मिश्र में राम द्वितीय का पुत्र मेनेप्ता था। इस्रायल में विद्रोह शुरू हुए थे। आखिर मेनेप्ता अभियानपर निकला। विद्रोहीयों को दण्डित करते हुए वह ओरोंटे नदी की ओर बढा। संभवतः कादेश के साथ मिश्री सेना टकराई। यह खत्ती राज्यपर आक्रमण ही था। अर्नुवंद ने यह आक्रमण दुर्लक्षित किया। आक्रमण के बावजूद मेनेप्ता खत्ती नरेश के साथ अच्छे संबंध चाहता था। खत्ती राज्य में भयंकर अकाल पडा। इस संकट काल में जल मार्ग से अनाज भेजकर मिश्र ने सहायता दी। परंतु मिश्र और खत्ती साम्राज्यके अच्छे संबंध रखना और उसका लाभ उठाना यह अर्नुवंद नही कर सका।

असुरिया का संकट सामने था। नहरीन की सीमापर असुर सेना आक्रमण करती रहती थी। खत्ती साम्राज्य तो अभी भी शक्तिशाली था परंतु अर्नुवन्द में अपने पूर्वजों की योग्यता नही थी। अर्नुवंद अल्पकालही राज्य पर था। अर्नुवंद और उसके पश्चात सुप्पिलुलीम द्वितीय इनके कालक्रम के बारे में निश्चित जानकारी नही है।

सुप्पिलुलिम द्वितीय

तुधलीय चतुर्थ के पश्चात कर्तृत्वशाली और पराक्रमी राजाओं की परम्परा खण्डित हुई। अर्नुवन्द के पश्चात सुप्पिलुलिम राज्यपर आया। वह तुधलीय (चतुर्थ) का पुत्र था परंतु पिता का कर्तृत्व उसमें नही था। खत्ती साम्राज्य विशाल था। अर्झवा, नहरीन, नुख्रश्शी जैसे महत्वपूर्ण राज्यों पर केवल खत्ती नगर में बैठकर नियंत्रण नही रखा जा सकता था। उन की भी अपनी समस्याएँ थी। अनेक छोटे राज्यों के महत्वाकांक्षी शासकों पर नियंत्रण रखने के लिये भी केंद्रीय सत्ता का नित्य संबंध आवश्यक था। खत्ती सम्राट प्रति वर्ष अभियान पर निकलते थे। शासकों को अपने सेना पथक भी उनके साथ देने पडते थे। खत्तीशील तृतीय के पश्चात यह परम्परा भी खण्डित हुई। किसी भी राष्ट्र को जीवित रहने के लिये निरंतर संघर्षरत रहना पडता है। संघर्ष की राजनैतिक इच्छाशक्ति का अभाव विदेशी आक्रमण को आमंत्रित करता है।

मिश्र जैसे महासत्ता के साथ संघर्ष करने की हिम्मत खत्ती राष्ट्र में थी। परंतु अब असुर आक्रमण के विरोध में भी अभियान चलाने की क्षमता खत्ती सत्ता खो बैठी थी। असुरियाने जब मितन्नि राष्ट्र को नष्ट किया तब खत्ती सत्ता समर्थ होते हुए भी असुर सेना के सामने खडी नही हुई। राजनैतिक दृष्टि से मितन्नि का अस्तित्व रखना आवश्यक था। बाबिलोन और एलाम असुरिया के शत्रुराष्ट्र थे। खत्तीशील के बाद असुरिया के शत्रुराष्ट्रों के साथ मित्रता के संबंध नही रखे गये। मिश्र के साथ भी राजनैतिक संबंधों में शिथिलता आ गयी थी।

सुप्पिलुलिम (द्वितीय) ने पश्चिमी सीमापर नियंत्रण रखने का प्रयास तो अवश्य किया परंतु असफल रहा। पश्चिम में अहियवन विद्रोही थे। मिल्लवंद में विद्रोह हुआ। अलसिया में खत्ती नौ सेना थी। उगारित का शासक खत्ती साम्राज्य के अधीन था। अलसिया द्वीप था। उगारित नुहश्शी में मध्य सागर के तटपर का बंदरगाह था । खत्ती साम्राज्यपर उत्तर से कस्की आक्रमण भी शुरू हुआ। सुप्पिलुलिम (द्वितीय) अभियान पर निकला। परंतु लुक्का तक नही पहुँच सका। खत्ती सेना उससे दूर लवसंदा में कस्कीयों के साथ युद्ध कर रही थी। सुप्पिलुलिस को कही से सहायता नही मिल रही थी। इस समय और एक आक्रमण जलमार्ग से हो रहा था। ये आक्रमक कौन थे इसकी जानकारी नही है। परंतु इस आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिये नौ सेना आवश्यक थी। उगारित से इसके पूर्व नौ सेना भेजी गयी थी। परिणाम यह था की उगारित असुरक्षित हो गया। शत्रुने उगारित का नाश किया। वही आक्रमक अमुरु तक पहुँचे। अमुरु भी उध्वस्त हुआ।

खत्ती नगर पर कस्कीओं ने आक्रमण किया। प्रबल सत्ता का यह वैभवशाली केंद्र उनके आक्रमण से नष्ट हुआ। खत्ती अभिलेख और अन्य भी मिश्री अभिलेख खत्ती साम्राज्य के अंतिम काल की घटनाएँ नही बताते। लगभग ११८० के दरम्यान खत्ती साम्राज्य पश्चिम एशिया के इतिहास पटल से अदृश्य हुआ। तथापि अगले पाँच सौ वर्षों तक खत्ती सभ्यता का कुछ स्थानों पर अस्तित्व था।[२६]

संदर्भ

१. पित्खन और उसके पुत्र अनित्त का नाम तीन पटियाँ पर प्राप्त हुआ है। १३०० इसा पूर्व के खत्ती रिकार्ड में भी उनके नाम आते है। उसमें अनित्त स्वयं उसके पिता के काल से चलते हुए संघर्ष का वर्णन करता है। गुर्ने ओ.आर.द. हिट्टाइट्स, पेंग्विन बुक्स, ग्रेट ब्रिटन, १९६२ पृ. १९.

२. संभवतः कणेश या गणेश (कुलतेपे) नगर का नाम ही नेसा था। गुर्ने पृ. १९

३. कुलतेपे की खुदाई में भारी संख्या में पटियाँ (क्ले टॅब्लेट्स) मिली है।

४. खत्ती कालक्रम में विद्वानों की सहमति नही है। डॉ. स्मिथ सिडने (अललख अँड क्रोनोलॉजी १९४०) ने जो कालक्रम सुझाया है उसे इस ग्रंथ में स्वीकृत किया है।

५. खत्ती विशेषनामों में शब्द को s, as, is प्रत्यय लगता है। जैसे खत्तुस (Khattusas), सुप्पिलुलिम (Suppilulimas) अंग्रेजी में हत्ती, हित्ती, हित्ताइत इन शब्दों का उपयोग किया जाता है। मूलतः यह शब्द खत्ती है। एच् का उच्चारण 'ख' है। ग के स्थानपर क का उच्चारण करने से गणेश अंग्रेजी में kanes लिखा गया । अलजा हुयुक का उच्चारण अलका हुयुक है।

६. उत्खनन में जले हुए राजप्रासाद और भवन के अवशेष सातवे स्तर में प्राप्त हुए है।

७. 'उर्शू का घेरा' यह मूल आख्यान अनुपलब्ध है। अक्कादी भाषामें अनुवादित कुछ अंश प्राप्त है।

८. आरमीनिया के उंचे पठारपर प्रभावी हरी सत्ता थी। अक्कादी रिकार्ड के अनुसार हनिगल्बत में हरी सत्ता थी। उस समय अलेप्पो, मालातिय ये नगर हनिगल्बत में थे।

९. घोषणापत्र के लिए देखिये- गुर्ने प्र.१७

१०. समसुदितन के वंश का प्रारंभ सुसू आबू (इसा पूर्व १२२५) से हुआ था। विख्यात नरेश खम्मुराबी (२११३-२०८०) इसी वंश में हुआ।

११. मुर्शिली के काल में खंतिली (कप बेअरर के) महत्वपूर्ण पर पर था। मुर्शिली की बहन उसकी पत्नी थी।

१२. दमास्कस के आगे उत्तर में ओरोंटो नदी की घाटी से पूर्व में युफ्रेट नदी तक कादेश, अलेप्पो, कर्केमि जैसे अनेक समृद्ध नगर थे। स्थानिक सीरियायी इस भूप्रदेश को नहरीन कहते थे। सीरिया को नुख्रश्शी कहते थे।

१३. हॉल.एच्.आर.द.एन्शे हिस्टॉरी ऑफ द नियर ईस्ट-लंडन-री प्रिंट १९४२. पृ.२५६

१४. संभवतः मुवा ही मुवतल्लीका हत्यारा था। एक रिकार्ड में इस हत्या के संदर्भ में 'मुवा तुम्हारी माँ को (रानी को) भी मार डालेगा' यह वाक्य आता है। अगर तुधलीय को निर्देश करके यह वाक्य होगा तो निष्कर्ष आता है की तुधलीय मुवतल्ली का पुत्र था। हत्या का षड्यंत्र मुवा का था।

१५. खत्तीशील द्वितीय के अस्तित्व के बार में संदेह है। एक सिद्धांत के अनुसार खत्तीशील तुधलीय तृतीय का भाई था। सुप्पिलुलिम तुधलीय का पुत्र था। विस्तार से जानकारी के लिये-गुटेरबक एच्.जी. द प्रीडीसेशर्स ऑफ सुप्पिलुलिम-जर्नल ऑफ नियर ईस्टर्न स्टडीज-२९ (१९७०)

१६. मुर्शिली ने उस का इतिहास लिखा है। (मुर्शिलीज ॲनल्स)

१७. किझुवत्न का धर्मगुरू पद महत्व का था। वह सिंहासन का अधिकारी नही हो सकता था। परंतु पद राजा से उंचा था।

१८. दुशरट्ट की कन्या तदुखिपा का विवाह अमेन हेतेप तृतीय से हुआ था। उसे गिलुखिपा भी कहा है।

१९. लेबनॉन के पर्वतमय प्रदेश में अमुरू राज्य का उदय हुआ। अब्दि अशिर्त उस का राजा था। पहले मिश्री सत्ता के अधीन था। सुप्पिलुलिम ते फिर अमुरू को खत्ती राज्य के अधीन किया।

२०. मिश्र नरेश अमेन हेतेप (१३७६) हे पश्चात अख्रेन तेन (अमेन हेतेप चतुर्थ) और उसकी रानी नेफेरतिती ने धार्मिक सुधारणा के नामपर क्रांती की। सूर्य की उपासना छोडकर अन्य देवताओं की पूजा, उत्सव बंद किये। उसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई।

२१. हॉल के ग्रंथ में कादेश का युद्ध मुर्शिली के काल से जोडा है। यह ग्रंथ १९१३ का है।

२२. हॉल ने कादेश के युद्ध का वर्णन 'द बॅटल ऑफ कादेश-डेसेनियल पब्लिकेशन-शिकागो, परसे लिया है। (पृ.३६०). कुछ इतिहासकार संदेह प्रकट करते है की मिश्री सेना सचमुच विजयी नही हुई।'

२३. मुवतल्ली (द्वितीय) का विवाह तनुखेपा से हुआ था। परंतु दोनो में मिलाप नही था। खत्तीशील ने उन्ही तेशुब को अवैध रानी का पुत्र कहा है।

२४. गुर्ने पृ. १७५

२५. हॉल पृ. ३६४

२६. हॉल पृ. ३६७, पादटिप्पणी

२७. टॉलेभी के समय पुरोहीतोंने प्राचीन लेखोंकी प्रतिलिपियाँ बनायी। उस में यह जानकारी आती है।

२८. खत्ती साम्राज्य के विनाश के बाद पांच सौ वर्षोंतक दक्षिण पूर्व के प्रांतों में खत्ती सभ्यता दिखाई देती है। असुर अभिलेखों में सीरिया और तौरूस का उल्लेख 'खत्ती भूमि' करके आता है। ओल्ड टेस्टामेंट में सीरियायी राजकुमारों का उल्लेख खत्तीयों के राजा इस प्रकार आता है। उस में से कुछ राजाओं ने खत्ती चित्रलिपि में उत्कीर्ण स्मारक भी खडे किये।

३.
खत्ती धर्म

खत्ती कौन थे !

बीसवी सदी के तीसरे दशक में जब अनातोलिया में पुरातात्विक स्थानों की खुदाई हो रही थी उस समय आर्य वंश के एक काल्पनिक सिद्धान्त के कारण हरी (हुरी) ओर मितन्नि इनको इंडो-युरोपियन कहा गया। भाषा विज्ञान के आधारपर समान भाषा बोलनेवाले एक समूह की कल्पना की गयी थी। मॅक्समुल्लर ने उनको आर्यन कहा। यद्यपि मॅक्समुलर ने स्पष्ट रुप से बाद में कहा की, 'आर्यन शब्द से मेरा तात्पर्य किसी मनुष्य जाति या वंश से नही है।' फिर भी इस अवैज्ञानिक सिद्धांत को उस समय के इतिहास लेखन का अधिष्ठान बनाया गया। आर्य शब्द वंशवाचक कभी नही था। आर्य याने सुसंस्कृत। वह गुणविशेषण था।[२]

जिस प्रकार भारत के इतिहास की रचना करते समय आर्य आक्रमण के सिद्धांत को आधार माना गया उसी प्रकार अनातोलिया के प्राचीन खत्ती इतिहास की रचना करते समय इंडो-युरोपियन के अनातोलिया में आक्रमण की कल्पना की गयी। खत्ती भाषा अनातोलिया के निवासियों की मूल भाषा नही थी। खत्ती इंडोयुरोपियन नही थे। इंडो युरोपियन समूह ने आक्रमण करके अपनी भाषा उनपर थोप दी।[३] जिस समय पुरातत्व की विधा प्राथमिक अवस्था में थी आर्य वंश की गलत धारणा प्रचलित थी उस समय के सिद्धान्तों का वर्तमान अनुसंधान के परिप्रेक्ष्य में पुनर्विश्लेषण करना आवश्यक है।

'खत्ती' यह नाम पाश्चात्य इतिहासकारों को प्रथम ओल्ड टेस्टामेंन्ट में प्राप्त हुआ। इस्रायली जब उनके प्रॉमिस्ड लँड में याने ईश्वरदत्त भूमि में आये तो उनके पूर्व ही जो जनजातियाँ वहाँ निवास करती थी उसमें खत्ती थे। जेनेसिस में उनको हित्ती या हत्ती कहा है।[४] पॅलेस्टाईन की एक जनजाति खत्ती थी। पॅलेस्टाईन में हेबोन के निकट एक गुंफा थी।[५] अब्राहन ने वह हेथ नामक व्यक्ति से

खरीद ली। यह हेथ अमोराईट और खत्ती की संतति थी। यहाँ तक की खत्ती राजाओं का उल्लेख भी दो स्थानपर मिलता है। लेबनान और युफ्रेट के बीच, भूप्रदेश में खत्तीयों का निवास था। अगर सीधा तर्कशुद्ध निष्कर्ष ही इसपरसे निकालेंगे तो कहना पडेगा की खत्तीयों की मूल भूमि लेबनान से युफ्रेट नदी तक की थी। बाद में अर्धसभ्य सेमाईट लोगोंका आक्रमण हुआ और उन्होंने खत्ती एवं अन्य जनजातियों को वहाँ से खदेडकर अपना प्रभुत्व स्थापित किया। इतिहास में जो परिभाषा रूढ है उस परिभाषा में यही निष्कर्ष होगा। परंतु ऐसा नही है। खत्ती अर्धसभ्य थे, असुर क्रूर थे इस प्रकार के विधान इतिहास को न्याय नही देते। सभ्यता की व्याख्या क्या है ? अर्धसभ्य याने क्या ? मिश्र नरेश ने नऊ सीरियायी बंदीयों को थिब्ज में लाया उसमें से तीन को मंदिर में देवता के सामने बली चढाया गया। दो बंदियों को मारकर थिब्ज के प्रवेशद्वार पर उनके शव लगाये। चार शव उत्तर में एथिओपियायी नगरों में टांग दिये गये। मिश्री सभ्यता के विकसित होने का निकष क्या होगा ? विश्व में तबसे लेकर आजतक अलेक्झांडर से हिटलर तक अपने राष्ट्र, समाज का प्रतिनिधित्व करनेवाले व्यक्ति हो गये। ग्रीस, जर्मन, जपान, जहाँ जहाँ साम्यवादी क्रांतियाँ हुई वहाँ, आधुनिक काल में हुई लाखों की हत्याएँ अर्थात रूस ओर चीन जैसे देश इन सभी को सभ्य, अर्धसभ्य, प्रिमिटीव्ह, क्रूर, असभ्य इसमें से कौन से विशेषण लगायेंगे ? एकेश्वरवादी समाज के राष्ट्रों ने कई देशों में वहाँ के मंदिर तोड दिये और उसी पर चर्च और मस्जीदे बनायी। उस में प्रदीर्घकाल तक हजारों मूर्तिपूजकों के कत्ल होते रहे। ऐसे राष्ट्र और समाज सभ्य, सुसंस्कृत, विकसित, पुरोगामी , निधर्मी कहलाएंगे या असभ्य, अर्धसभ्य, जंगली, क्रूर, पिछडे कहलाएंगे ? इतिहास के विद्वानों के लिये इस प्रकार की चर्चा करके उस के निकष निश्चित करनेकी आवश्यकता है। फिर कोई इतिहास की परिभाषा निश्चित हो सकेगी।

यही स्थिती भाषाविज्ञान के संदर्भ में भी सामने आती है। मितन्नि नाम पाश्चात्य विद्वानों को भारतीय (अर्थात उनकी परिभाषा में आर्यन) लगते है। शौशतर, शुतर्न, अर्तशुमर, अर्ततम, दुशरट्ट, मत्तिवज (या सत्तिवज) इनको वे आर्यन नाम मानते है। परंतु खत्तुशिली (खत्तु-खत्ती याने क्षत्रिय + शिली-शील याने चारित्र्य) यह भारतीय नाम नही लगता। वस्तुतः तनुखिपा

(तनुक्षेपा), पुदुखेपा (पदक्षेपा), अर्नुवंद, अलकसंदु (अलक्षेन्दु या अलक्षेंद्र) पियस्सिली (प्रियशील) तार्तिशिवु (ताराशिव),नेरिग्गा शाम (नृग शाम), अत्तऋषिय, मद्दुवत्त (मधुवत्त), मुनीदना ये सभी नाम खत्ती इतिहास से जुडे हुए है परंतु ये उनको आर्यन नही लगते।

अनातोलिया में अनेक नगरनाम भी भारतीय है। पुरुषखण्ड, गणेश, शिवस, लवश (आर्जवा), मिरा, कुवलय (कुवलिया), मालाती या मालाती, कयसेरी (कयश्री), शिवस, लवश (लव), लकुश, अलका (अलजा हुयुक) कटावदान या कटवदन ऐसे कतिपय नाम भारतीय ही हो सकते है। अगर अनातोलियन,कुर्दी, लुवियन – किसी भी भाषाके होंगे तो उस का अर्थ उस भाषापर संस्कृत भाषा का प्रभाव है।

अहियवन केवल भारतीय शब्द नही भारतीय जनजाति का भी नाम हे। अरिन्ना या अरिउना अरण्या या आर्याना है। कुरुसर नरेश अनित्त इसमें ध्वनित नगर नाम और राजा का नाम भारतीय है।

इतिहास का सत्य यह है की समान भाषा बोलनेवाला किसी भी नाम का कोई एक मानवसमूह भारत के बाहर कभी भी अस्तित्व में नही था। वेदकाल से भारत में वैदिक संस्कृति विद्यमान है। वैदिक जन भारत से पूर्व एवं पश्चिम में जाते रहे थे। उन्होने सुमेर, मिश्र, तक की सभी सभ्यताओं को प्रभावित किया। मध्य एशियातक तो पहले वैदिक संस्कृति का प्रभावक्षेत्र था ही।[६] एलाम से मिश्र एवं सुमेर और कश्यप सागर से अनातोलिया तक इस प्रभाव क्षेत्र का जो विस्तार हुआ उसमें मितन्नि, खत्ती, वृज्जि (फ्रिजिअन) इनका इतिहास आता है।

भारतीय भारत के बाहर गये। उनका उद्देश आक्रमण करके किसी भूप्रदेश पर कब्जा करना,वहाँ की जनजातियों का जीवन उध्वस्त करना इस प्रकारका नही था। उतनी संख्या में वे नही गये। लष्करी अभियान (मिलिटरी कॅम्पेन) के रूप में वे नही गये। जानेवाले कौन थे ? और क्यूं गये ? उनके स्थलांतरण की प्रक्रिया क्या थी। इसकी जानकारी प्राप्त करने के प्रयास नही हुए है। परंतु एक निश्चित है। स्थलांतरित समूह में राजपुत्र, सैनिक, धार्मिक पुरुष, आध्यात्मिक साधक, विश्वकर्मा, आचार्य, ऐसे विविध स्तर के व्यक्ति होंगे। नये भूप्रदेश में वे अल्पसंख्य थे। वहाँ की सभ्यता में वे धुलमिल गये होंगे। उनकी जीवन पद्धति, उनका भाव विश्व, ईश्वर विषयक उनकी कल्पनाएँ,

उनकी भाषा उनकी सामाजिक व्यवस्था इनका स्वीकार करते हुए उनको नैसर्गिक (स्वाभाविक) प्रक्रियासे प्रभावित किया। 'प्रजा स्थानिक और शासक वर्ग खत्ती' यह केवल आधारहीन कल्पना है। मूल सभ्यता का कोई नाम नही है। इसलिये जो स्थलांतरित अनातोलिया में गये उन के प्रभाव के कारण सभी खत्ती कहलाए। राजनैतिक प्रक्रिया से वह खत्ती राज्य बना। सांस्कृतिक प्रक्रिया से खत्ती समाज एक राष्ट्र के रूप में खडा हो गया।

इस प्राचीन खत्ती राष्ट्र का इतिहास पुरातात्विक साधनों के आधार पर ही लिखा जा सकता है ये पुरातात्विक आधार, 'खत्ती सभ्यता भारतीय संस्कृति से प्रभावित थी इसकी ओर स्पष्ट निर्देश करते है।'

खत्ती देवता

खत्ती देश में अनेक सम्प्रदाय थे। हर एक सम्प्रदाय का देवता था। अलग पूजा पद्धति थी। खत्ती नरेश सभी सम्प्रदायों का आदर करते थे। सर्वश्रेष्ठ पुरोहित होने के नाते सभी सम्प्रदायों के प्रमुख उत्सव पर उनके मंदिरों में जाकर सम्मिलित होते थे। मंदिरों के व्यवस्था का दायित्व स्थानिक प्रशासक और प्रांतीय राज्यपाल का था। खत्ती साम्राज्य की सम्पन्नता में जैसे भी वृद्धी होती गयी प्रांतों के प्रमुख केंद्र के मंदिरों का वैभव वृद्धिगत होता गया।

खत्ती नरेशों ने संप्रदायों के एकीकरण का प्रयास नही किया। सब पंथों के देवताओं की उपासना को प्रोत्साहन देने की नीति अपनायी। फिर भी शासन केन्द्रीय था जिसके फलस्वरुप एकात्म राष्ट्र, समाज और शासन की दृष्टि से प्रमुख देवता मण्डल की कल्पना की गयी।

शासन के संधिपत्र, करार, आज्ञाएँ इस पर देवताओं की प्रेरणा, साक्ष, उन के आशीर्वाद इसका उल्लेख आवश्यक था। उस के लिये सभी स्थान के स्थानिक देवताओं की सूचि बनायी गयी। समान देवताओं का वर्गीकरण करके देवता मण्डल बनाया गया। राज्य और राजवंश की सुरक्षा का दायित्व विशिष्ट देवताओं का था जो राष्ट्रीय देवता के रूप में सामने आये। बोघाज कुई में अनेक उत्कीर्ण पटियाँ पर राजपरिवार के सदस्यों की प्रार्थनाएँ, पुरोहित और देवता के सेवकों को दी हुई सूचनाएँ, पूजा पद्धति, पौराणिक कथाएँ प्राप्त हो

गयी है। देवताओं के नाम भी उन पर उत्कीर्णित है। तत्कालीन स्मारकों से पता चलता है की विशिष्ट चिन्ह और प्रतिकों से देवताओं की पहचान होती थी।

तेशुब (ऋतुदेव या वरुण)

तेशुब खत्ती राष्ट्र का प्रमुख देवता था। वरुण या इन्द्र देव से उसकी समानता दिखाई देती है। हरी देवताओ में भी तेशुब देवता महत्वपूर्ण था। बोघाज कुई में याजिलिकया के पाषाण पर उत्कीर्ण शिल्पों में तेशुब की प्रतिमा है। घनी दाढी और मूछ है। दाहिने हाथ में दण्ड जैसा शस्त्र है। उसने अपने पैर दो मानवाकृती पर्वतों की ग्रीवा पर रखे है। खत्ती पौराणिक वर्णन के अनुसार वरुण देव की मूर्ति सुवर्ण की होती थी। उस के दाहिने हाथ में गदा और बाएँ हाथमें त्रिशूल होता था। सीरिया के ऐतिहासिक स्मारकों में वह अकेला है। उस के हाथों में कुल्हाडी और विद्युतरेखा है। बैल तेशुब का पवित्र पशु था। तेशुब धरती का कल्याणकारी देवता था। पर्वतों पर से रथ में वह प्रवास करता था। रथ को बैल जोते हुए रहते थे।

देवी खेपत (हेबत)

देवी खेपत वरुण देव या तेशुब की शक्ति स्वरूपा देवी थी। उस का वाहन सिंह था। तेशुब और खेपत देवी की पूजा सार्वत्रिक थी। अलेप्पो, समूहा (मालाती), कुम्मन्नि, उदा, खुर्मा और आप्झिस में भी उनके मंदिर थे। याजिलिकया के शिल्पों में देवी सिंहवाहिनी है। सिंह के पीठ पर वह खडी है। तेशुब परिवार देवता है। शिल्प में देवी के पीछे उनका पुत्र–चलता हुआ दिखाई देता है। यह है शर्मा या शरुंभ देवता।

शुष्का देवी - (शौष्का)

तौरस के प्रदेश में शुष्का देवी विख्यात थी। समूहा में उसका मंदिर था। शुष्का देवी भी सिंहवाहिनी थी। निनत्ता और कुलित्ता ये दोनो उस की सेविकाएँ थी। खत्तीशील तृतीय की वह कुलस्वामिनी थी। किसी भी महत्वपूर्ण कार्य के पहले खत्तीशील उस की अर्चना करके सकुन प्राप्त करता था। जब खत्तीशील का चरित्र (क्रानिकल्स) लिखा गया तब शुष्का देवी का अनुष्ठान करके वह उसे अर्पित किया गया। खत्ती मुद्राओंपर उत्कीर्ण शुष्कादेवी

पंखयुक्त है और दोनों बाजूमें उसकी सखीयाँ हे। मितन्नि राष्ट्र के पश्चिम में तौरस पर्वत की तलघाटी में अनेक समृद्ध नगर थे। उसमें एक महत्वपूर्ण नगर था 'तुवनुवा'। तुवनुवा में भी वरूण देव का मंदिर था। यह भी तेशुब काही स्वरूप था। उसकी शक्तिस्वरूपा देवियों के अनेक नाम थे। सहस्सरसा (सहस्रसा), दशिमी, हुवस्सनास (सुवक्षना) आदि नाम से इन देवियोंकी अर्चना होती थी। तुवनुवा में और एक देवता वुरुड्कट्टी नामसे विख्यात था। कुरुडकट्टी का अर्थ होता है भूमि नरेश। संभवतः यह नगर का रक्षक देवता था।

सूर्यादेवी - सूर्यदेव

तुवनुवा के उत्तर में खत्तीओं का महत्वपूर्ण धार्मिक क्षेत्र अरिन्ना नगर था। खत्ती नगर से एक दिन के प्रवास की दूरीपर यह पवित्र स्थान था। यहाँ वुरुसेमू देवी का मंदिर था। यह थी सूर्या देवी । वह स्वर्ग और पृथ्वी की स्वामिनी थी। खत्ती राजवंश की कुलदेवी थी। खत्ती राष्ट्र की संरक्षक देवी थी। राष्ट्र पर कोई संकट आ गया तो अनुष्ठान पूर्वक उसकी अर्चना की जाती थी। उस के लिये विशेष पुराहित और अर्चक नियुक्त किये जाते थे। पौराणिक परम्परा के अनुसार सूर्य सब देवताओं का राजा था। न्याय का भी देवता था। सूर्या देवी और सूर्य देव तो एकात्म ही है। फिर पौराणिक कल्पना जलस्थ सूर्य देव की थी। उस के मस्तक पर मत्स्य होते थे। एक पाताल लोक का सूर्य देव था। दिन में सूर्य देव पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर भ्रमण करता है परंतु रात्रि को वह पश्चिम दिशा से पूर्व दिशा की ओर भ्रमण करता है। वह है पाताल का सूर्य देव।

सूर्या देवी का परिवार था। मेझुल्ला देवी और खुल्ला (हुल्ला) देवी ये सूर्या देवी की कन्याएँ थी। सूर्या देवी की एक पोती थी वह जिंतुही देवी नाम से विख्यात थी। सूर्य सर्वश्रेष्ठ देवता था। मुवतल्ली राजा सूर्य की प्रार्थना करते हुए कहता है,

'हे स्वर्गस्थ सूर्यदेव,
मेरे स्वामि, मनुष्य के मार्गदर्शक,
तू सागर से प्रकट होता है और स्वर्ग तक भ्रमण करता है–
हे स्वर्ग के सूर्यदेव –

प्रतिदिन मनुष्य, पशुपक्षी सभी पर तुम्हारी दृष्टि होती है –
तुम सब का न्याय करते हो।'

सुख और दुःख में अंतिमतः ईश्वर का ही सहारा होता है। खन्तुशिली (कन्तुझिली) मुवतल्ली प्रथम के काल में एक रथदल का प्रमुख था। मुवतल्ली की हत्या के षड्यंत्र में संभवतः उसका हाथ था। राजा की अवकृपा हो गयी। शारीरिक अस्वास्थ्य एवं मानसिक तनाव से वह निराश हुआ था। ऐसी अवस्था में उसने जो प्रार्थना की, उससे ईश्वर और भक्त के संबंध भी स्पष्ट होते है। प्रार्थना के कुछ अंश इस प्रकार है।

''हे सूर्यदेव, जब आप मेरे कुलदेवता के साथ मृत्युलोक में प्रयाण करेंगे तब उसे मेरी दुःखद स्थिती अवगत कराने नही भूलता।

माताने जबसे मुझे जन्म दिया आपने ही मेरा पालन किया है। आप ही मेरा सहारा हो। जब कभी मैंने सुख को अनुभव किया तब भी मैं ने आप की श्रेष्ठ शक्ति और आप की कृपा का कृतज्ञतापूर्वक स्मरण किया। आपकी शपथ लेकर जो भी संकल्प किया उसे कभी मैंने तोडा नही।

जीवन और मृत्यु तो परस्पर संलग्न है। मनुष्य अमर नही है। उसके जीवन का काल निश्चित है। अगर वह अमर होता तो अतीव दुःखदायक अस्वास्थ्य की चिंता नही करता।

हे मेरे स्वामि, मैं आपकी भक्ति कैसे करूँ यह भी मैं नही जानता। आपही सबके मार्गदर्शक है। दुर्भाग्य से मेरा जीवन दुख का घर बन गया है। मैं आप के दया की भीख मांग रहा हूँ। मुझपर राजा की कृपा रहे। जीवन भर मैंने जिनका भला किया वे भी मेरा कुशल नही चाहते। हे ईश्वर....आपही मेरे माता और पिता है।[६]''

तीसरे खत्तीशील का विवाह किझुवत्न राज्य के कुम्मन्नी की राजकुमारी पदुखेपा से हुआ था। कुम्मन्नि खेपत देवी की उपासना का प्रमुख केंद्र था। संभवतः महारानी पदुखेपा के प्रभाव के कारण खत्ती राष्ट्र में खेपत देवी की अर्चना को महत्व प्राप्त हुआ। अरिन्ना अर्थात सूर्या देवी ओर खेपत देवी का साधर्म्य प्रस्थापित हुआ। मिश्र और खत्ती राष्ट्र के बीच जो ऐतिहासिक संधिपत्र बना उसमें वर्णित मिश्र की राजमुद्रा पर अरिन्ना देवी महारानी पुदुखेपा पर कृपा करती हुई (आलिंगन देती हुई) दिखायी गयी थी। खत्तीशील को अर्पित एक

प्रार्थना में देवी खेपत को ही अरिन्ना देवी कहा है।[७] याजिलिकया के शिल्पों में संभवतः खत्तीशील एवं पुदुखेपा के विवाह को, खत्ती वरूण देव और किझुवत्न की देवी खेपत इनके विवाह के माध्यम से दिखाया गया है।[८] जिस प्रकार देवी अरिन्ना ओर देवी खेपत का साधर्म्य प्रस्थापित हुआ उसी प्रकार से खत्ती वरूण देव और किझुवत्न का प्रमुख देवता तेशुब इनका भी साधर्म्य प्रस्थापित हुआ। वायु देव का पुत्र शर्मा था। नेरिक और झिप्पलंदा के वरूण देव का साधर्म्य शर्मा देव के साथ स्थापित हुआ।

तेलिपिनू

नेरिक नगर अरिन्ना की पूर्व दिशा में था। नेरिक में तेलिपिनू का मंदिर था। तेलिपिनू वरूण देवता का पुत्र था। अपने पुत्र की प्रशंसा में स्वयं वरूण देव कहता है, 'यह मेरा पुत्र शक्तिशाली है। वह भूमि को समतल बनाता है। हल से उसे कृषियोग्य बनाता है। जल के लिये वर्षा का प्रबंध करता है।' तेलिपिनू के संदर्भ में पौराणिक कथाएँ थी। पुरूली के उत्सव में ये कथाएँ सुनाई जाती थी। तेलिपिनू का संबंध निसर्ग के चैतन्यमयी रूप से है। शिशिर ऋतु में निसर्ग चैतन्यहीन दिखाई देता है। वसंत ऋतु में पुनः चैतन्य प्राप्त होता है। जन्म, मृत्यु और अमरत्व के प्रतीक रूप निसर्ग का प्रतिनिधित्व तेलिपिनू करता था। इन देवताओं के अलावा सरिश्शा, कररुन ओर अन्य अनेक स्थान पर भाग्यदेवता विख्यात था। हिरन उसका वाहन था। उसके दाहिने हाथ में बाज पक्षी था और बाये हाथ में पाश था। वह स्वर्गस्थ युद्ध देवता था। यह एकमेवाद्वितीय युद्ध देवता खत्ती राष्ट्र का स्वामी था।

खत्ती मंदिर

खत्ती मंदिर विशाल थे।[९] खत्ती नगर में उत्खनन में प्राप्त मंदिर का क्षेत्र ६४ मी. लंबा और ४२ मीटर चौडा था। मंदिर का प्रवेश ईशान्य दिशा में था। प्रवेशद्वार से सटकर अंतराल जैसा नक्काशीदार स्तंभों से युक्त छोटा कक्ष था। आयताकार मध्य भाग के तीन ओर अनेक कक्ष थे। गर्भगृह प्रवेशद्वार के सम्मुख नही था। प्रवेश करने के पश्चात बायी ओर मुडकर दो कक्ष पार करके

अंतिम छोरपर गर्भगृह था। कभी कभी मंदिर के तीन ओर की अनियमित कक्षों की मालिका से अलग मध्यभाग में स्वतंत्र रूप से गर्भगृह का कक्ष था। गर्भगृह ग्रेनाईट पत्थर से बनाते थे जब की अन्य कक्ष चूना-पाषाण के थे। एक कक्ष में अलग से पशुबली के हेतु बनायी हुई वेदी तथा अग्नि जलाने का कुण्ड प्राप्त हुआ। सभी मंदिरों में यही पद्धति होगी।

गर्भगृह में मूर्तियाँ स्थापित होती थी। मूर्तियों के अधिष्ठान (आसन) तो उत्खनन में मिले है परंतु मूर्तियाँ नही मिली है। मूर्तियाँ मौल्यवान धातु की बनायी जाती थी। या तो लकडी की मूर्ति बनाकर उसपर सुवर्ण का मुलम्मा चढाते थे। यही कारण होगा की मूर्तियाँ स्थान पर नही छोडी गयी। पौराणिक परम्परा के अनुसार झबब नामक देवता की मूर्ति चांदी की बनायी जाती थी। खडे सिंह की पीठपर वह खडा होता था। नीचे का अधिष्ठान भी चांदी का होता था। उसके दाये हाथ में गदा और बाये हाथमें ढाल थी। उस की शक्तिस्वरूपा देवी पंखयुक्त थी। देवी के दाये हाथ में सुवर्णपात्र और बाये हाथ में जगत् के कल्याण का प्रतीक होता था। उसका वाहन था गरूड सिंह जिस का शरीर सिंह का और मुख गरूड का था। यह शुष्का देवी थी। निनता और कुलिता ये उसकी सखियाँ दोनो और खडी अवस्था में थी।

वरूण देव का प्रतिक वृषभ था। अलका हुयुक में प्राप्त शिल्प में खत्ती नरेश वृषभरूप वरूणदेव की पूजा करते हुए दिखाया है। याजिलिकया की दीर्घा में एक खड्ग देवता उत्कीर्ण है। खड्ग की मुद्रा गर्जना करनेवाले चार सिंह से युक्त है। दो सिंह उपर पीठ से पीठ लगाये हुए ओर दो अधोमुख है। उपर देवता का मुख है जिस के सिर पर खत्ती मुकुट है।

मंदिर में प्रतिष्ठीत देवता की देखभाल पुरोहित करता था। हर रोज देवता को स्नान कराया जाता था। वस्त्र पहनाए जाते थे। प्रसाद चढाया जाता था। नृत्य एवं संगीत द्वारा देवता की आराधना की जाती थी। स्नान अंदर के कक्ष में कराया जाता था। सुगंधी द्रव्य से देवता का लेपन करके नहाते थे। अर्चना के पूर्व पुरोहित की अंतर्बाह्य शुचिता अपेक्षित थी। अगर पुरोहित का स्त्री से संपर्क हुआ तो उसे प्रायश्चित लेकर शुद्ध होना पडता था। प्रसाद के व्यंजन भी शुद्ध तरिके से बनते थे। प्रसाद बनानेवालों को भी शरीर की शुद्धि आवश्यक थी। पुरोहितों के लिये कठोर नियम थे। वे शाम को तो नगर में रह

सकते थे। रात को मंदिर में लौटते थे। अगर किसी पुराहित ने रात्रि को अपने पत्नी से संपर्क किया तो उसे मृत्युदण्ड दिया जाता था।

मंदिर में अग्निहोत्र होते थें उस की व्यवस्था के लिये कर्मचारी नियुक्त थे। मंदिर की सुरक्षा व्यवस्था स्वतंत्र थी। दिन भर खत्ती स्त्री पुरूष परिवार मंदिर में दर्शन के लिये आते थे। ईश्वर के चरणों में कुछ ना कुछ अर्पण करते थे। उस में सब प्रकार के फल, अनाज, खाद्य पदार्थ, वस्त्र, अलंकार रहते थे। खेत में फसल तैयार होते ही प्रथम मंदिर में जाकर देवता को अर्पित करके फिर काटना शुरू करते थे।

बली चढाने की प्रथा थी। बैल, भेड, बकरी इन की बली चढाते थे। उस के विशेष मंत्र होते थे। नरबली की प्रथा आमतौर पर नही थी। फिर भी उस के प्रासंगिक उल्लेख प्राप्त हुए है। खास करके युद्ध में खत्ती सेना हार गयी तो जीत के लिये ईश्वर की प्रार्थना करके नरबली दिया जाने का उल्लेख आता है ।

पुरुली का उत्सव

वर्षभर में बहुत से उत्सव मनाएं जाते थे। अठारह उत्सवों का उल्लेख मिलता है। यह उल्लेख तथा वर्णन खत्ती नगरी में मनाए जानेवाले उत्सवों का है। सभी नगरों में ऐसेही उत्सव मनाए जाते होंगे। पुरुली उत्सव सबसे महत्वपूर्ण था। मुर्शिली जब युद्ध के अभियान पर था तब इस उत्सव के लिये खत्ती नगर में लौटा था। उत्सव के समय पौराणिक कथाओं का पारायण होता था। यह लिल्वनी देवी का उत्सव था। वह पृथिवी देवी थी। जिसके सम्मान में वसंत ऋतु के आगमन पर यह उत्सव मनाया जाता था। वसंत ऋतु का आगमन सुखद था। भयंकर जाडे के प्रतिकुल काल के पश्चात् धरती पुनः अपनी उर्जा प्राप्त करती थी। उर्वरा बनती थी। इसी उपलक्ष्य में उस उत्सव का आयोजन होता था।

खत्ती नरेश जब स्वयं उत्सव मनाते थे तब उत्सव की पूरी प्रक्रिया किस प्रकार हो इसकी सूचनाओं को पटियाँ पर उत्कीर्ण कराया जाता था। वसंत ऋतु में उगती हुई अंदशुम खत्तीयों के लिए जीवनदायी वनस्पती थी। उत्सव के पर्व पर सभी खत्ती नगरों के मंदिर में अनेकविध वस्तुओं के साथ अंदशुम अर्पित किया जाता था। उत्सव के पर्व पर जो कर्मकांड किया जाता था उसका वर्णन पटियापर उत्कीर्ण पुस्तक में उपलब्ध हुआ है।

'खलेंतुबा भवन से राजा और महारानी बाहर आते है। दो राजकर्मचारी और अंगरक्षक उनके आगे चलते है। सरदार और अन्य रक्षक उनके पीछे चलते है। यात्रा (जुलूस) में आगे और पीछे देवताके अर्चक अर्कामी, हुहुपल और गर्ल्तुरी इन वाद्यों का घोष करते हुए चलते है। पीले वस्त्र पहने हुए कतिपय अर्चक हाथ उपर उठाते हुए नाचते गाते चलते है।'

'झबब के मंदिर में राजा और रानी प्रवेश करने के पूर्व राजदूत उन के आगमन का घोष करते है। अर्चक उनका स्वागत करते है। राजा और रानी शूल (शस्त्र) का वंदन करके आसनस्थ होते है। राजसेवक सुवर्णशूल का वस्त्र और राजदण्ड लेकर राजा के सम्मुख आता है। वस्त्र राजा के हाथ में देता है और राजदण्ड (लित्तुस-सत्ता का प्रतिक) राजा के दाहिनी ओर सिंहासन के पास रखता है।'

'दो सेवक सुवर्णपात्र में जल लाते है। राजा और रानी हाथ धोते है। एक सेवक वस्त्र लेकर आगे आता है। राजा रानी हाथ पोछ लेते है। फिर राजा का प्रमुख सेवक और उसके पीछे भोजन प्रबंधक आगे आते है। सेवक आकर राजकुमारोंको उनके आसन दिखाकर उनको वहाँ तक ले जाता है। राजसेवक बाहर जाकर प्रमुख रसोईया के सम्मुख खडा होता है। रसोईया एक पद आगे आता है। फिर राजसेवक खत्तीयों के स्वामि (राजा) और माता (रानी) इनको उनके आसन तक ले जाता है।''

''उत्सव प्रबंधक अंदर आकर राजा की अनुज्ञा लेकर राजसेवक को सूचना देता है। फिर बाहर जाकर पुकार लगाता है 'महाराज और महारानी तैयार है।' राजसेवक गायकवृंद को सूचित करता हे। गायकवृन्द इश्तर वाद्य के साथ उसके पीछे जाकर अपने स्थान को ग्रहण करते है। रसोईये भोजन की थालियाँ, जल और खानेके सब प्रकार के व्यंजन लाकर रखते है। फिर पेय दिया जाता है। राजा भोजन की थालियों पर का वस्त्र उछाल देता है। राजसेवक और राजरक्षक सर झुकाये खडे रहते है। उछाला हुआ कपडा जिनकी ओर जाता है वे भोजन प्रबंधक को वह वस्त्र देते है। फिर राजा स्वच्छता करनेवाले सेवकों को संकेत करता है।[१०]''

यहाँ प्रत्यक्ष भोजन नही होता। उत्सव की प्रक्रिया में एक संकेत मात्र

होता है। इस प्रकारकी प्रक्रिया में फिर पूजा, यज्ञ (बली), प्रार्थना इन सब विधियों का विस्तार से वर्णन पटियाँ पर मिलता है। पतझड कालीन ऋतु में गुर्शमश नगर का देवता यर्री का उत्सव विशेष रूप से सम्पन्न होता था। पूजा के पश्चात यर्री देवता की मूर्ति को मन्दिर के बाहर लाते थे। सब को प्रसाद (भोजन) दिया जाता था। संगीत होता था। उसके बाद मैदान में देवता के सामने नकली युद्ध का खेल होता था। युवकों की टोलियाँ बनाते थे। एक टोली को खत्ती कहा जाता था। उनके हाथों में तांबे के हथियार होते थे। दूसरी टोलीको मसा के लोग कहते थे जो शत्रु थे। उनके हाथ में शस्त्रके रूप में सरकंडे रहते थे। उनमें युद्ध होता था अर्थात खत्ती टोली की जीत होती थी। हारनेवालों को बंदी बनाकर देवता को अर्पण किया जाता था। अन्य कुछ अपूर्ण पटियाँपर ऐसेही एक वैशिष्ट्यपूर्ण उत्सव का वर्णन प्राप्त होता है।

उषःकाल में एक सजीला रथ मंदिर के सम्मुख लाकर खडा करते थे। नीले और शुभ्र पताकाओं से रथ को मण्डित करते थे। मंदिर से मूर्ति को बाहर लाकर रथ में स्थापित करते थे। फिर रथयात्रा निकलती थी। बुर्रूती और कन्नु स्त्रियाँ, नर्तकियाँ और देवदासियाँ हाथो में दीपक लिये आगे चलती थी। ताविनिया द्वार से निकलकर रथयात्रा गांव के बाहर जंगल में तर्नावी घर (देवप्रासाद) के पास आकर रूकती थी। उस मंदिर में मूर्ति स्थापित करके पुरोहित अनुष्ठान करते थे। खत्ती देवता, उनकी उपासना और पूजा पद्धति, ईश्वर और भक्त संबंध, उत्सव, रथयात्राएँ इनका वर्णन जब देखते है तब भारतीय प्रभाव पूरी तरह से स्पष्ट होता है। पौराणिक कथाएँ सुनानेवाले चारण थे।

मंदिरों का वर्णन करते हुए चारण कहता है ....

''सूर्य देवता सिप्पर में निवास करते है ....
चंद्र देव खुजिना में वसते है .....
वरूण देव रहते है कुम्मिया में,
इश्तार रहते है निनेवे में.....
ननाई का निवास है किश्शिना में,
और मर्दुक का निवास है बाबिलोन में''[११]

पश्चिम एशिया के सभी देवता चारणों के वर्णन में आते है। सर्वशक्तिमान ईश्वर का इस प्रकार तादात्म्य स्थापित करने की यह मानसीकता खत्ती राष्ट्र के सांस्कृतिक और आध्यात्मिक स्तर को एक उंचाई पर ले जाती है।

पौराणिक कथाएँ

खत्ती राष्ट्र में हर गांव में मंदिर होते थे। उत्सवों में पौराणिक कथाएँ सुनाई जाती थी। खत्ती पुराण होंगे, पर उपलब्ध नही है। कुछ पौराणिक कथाओं का संकेत प्राप्त होता है। एक कथा अपूर्ण रुप से मिली है। सर्पासुर का वध यह दैवी नायक और सैतानी शक्ति का संघर्ष है। प्रथम संघर्ष में सर्पासुर इल्लुयांक वरुण देव को पराजित करता है। वरुण सब देवता और देवीयों को आवाहन करता है। देवी इनारस सभी को भोज के निमित्त एकत्रित करती है। सर्पासुर को नष्ट करने के लिये वह हुपशीय देवता से याचना करती है। हुपशीय उसकी सहायता के बदले में एक शर्त रखता है की देवी इनारस एक रात के लिये उसकी पत्नी बने।

'हुपशीय तरह तरह की मदिरा बनाकर सर्पासुर को उसके परिवार सहित खाने पीने के लिये आमंत्रित करता है। अपने बच्चों के साथ सर्पासुर हुपशीय के घर पर जाता है। शराब के पूरे पात्र खाली करके सर्पासुर और उसके बच्चे अपनी प्यास बुझाते है। वे वही पर नशे से धुत होकर अर्धमूर्छित अवस्था में बैठे रहते है। उसी समय वरुण देव वहाँ आकर सर्पासुर का वध करता है। अब देवी इनारस को अपनी शर्त पूरी करनी है। वह तरुक्क की पहाडी पर एक घर बनाती है। वहाँ पर हुपशीय को बुलाकर कहती है। अब इसमें तुम्हे रहना है। मैं यात्रा पर जा रही हूँ तब तक यहाँ पर रहो' फिर मैं तुम्हारी इच्छा पूर्ण करूंगी। भूल से भी घर की खिडकी मत खोलना। अगर खोलोगे तो तुम्हे तुम्हारी पत्नी और बच्चे दिखाई देंगे। इनारस चली जाती है। उसकी प्रतीक्षा में हुपशीय बेचैन होकर वहाँ रहता है। अस्वस्थता एवं उत्सुकता से बीस दिन के पश्चात वह खिडकी खोलता है। उसे उसकी पत्नी और बच्चे दिखाई देते है। परंतु वह उनके पास नही जा सकता। जब देवी इनारस वापस आती है तब हुपशीय व्याकुळ होकर उसकी प्रार्थना करता है और कहता है की मुझे मेरी पत्नी और बच्चों के पास लौटना है।'कथा का आगे का हिस्सा पटियाँ खराब होने की वजह से समझ में नही आता। यही सर्पासुर और वरुण के संघर्ष का आख्यान और एक

रूप में प्राप्त हुआ है। 'संघर्ष में सर्पासुर वरुण को पराजित करके उसकी आँखे और हृदय निकालकर ले जाता है। वरुण विवश होकर कपटनीति का आश्रय लेता है। एक गरीब कन्यासे विवाह करके पुत्रप्राप्ती कर लेता है। यह वरुणपुत्र जब युवा होता है तब सर्पासुर की कन्या से विवाह करके ससुराल में जाकर रहता है। एक दिन अपने पिताका हृदय और आँखे प्राप्त करके वह पिता के पास आता है। वरुण देव अपनी आँखे और हृदय प्राप्त होते ही फिरसे शक्तिमान बन जाता है। सागर के तट पर जाकर वह सर्पासुर को युद्ध के लिये ललकारता है। भयंकर युद्ध में वरुणदेव सर्पासुर का वध करता है। उसी समय वरुणपुत्र अपने पिता से कहता है कि मुझे भी मार डालो। वरुण देव अपने पुत्र का भी वध करता है। इस आख्यान में सर्पासुर का निवास पाताल (सागर तल) में है। दूसरी बात सामने आती है कि सर्पासुर के कुल में विवाह के पश्चात लडका लडकी के घर जाता है। वरुणपुत्र की विवशता भी स्पष्ट होती है। अगर वह जीवित रहता तो वह और उसके होनेवाले पुत्र वरुण देव के शत्रु ही रहते और यह शत्रुत्व आनेवाली पीढी में भी रहता। पहली कथा में भी देवी इनारस हुपशीय की शर्त मान तो लेती है परंतु हुपशीय के साथ पत्नी का नाता एक रात के लिये भी उसे स्वीकार नही था। वह कथा अपूर्ण है। परंतु हम कल्पना कर सकते है की देवी इनारस ने योजनापूर्वक, देवता होकर भी ऐसी शर्मनाक शर्थ रखनेवाले हुपशीय को दण्डित किया होगा। उसने शर्त नही पूरी की इसका लाभ लेकर उसका नाश किया होगा। इस प्रकार के और भी आख्यान होंगे परंतु उनकी जानकारी नही है। खत्ती शिल्प भी इस प्रकारके पौराणिक कथाओं का आधार बनाकर बनाये हुए दिखते है। मालाती में एक शिल्प में सर्प दिखाया गया है जिसके शरीर से अग्नि की लपटे निकल रही है। दो देवता उसके सामने है। प्रमुख देवता उस पर शूल का प्रहार कर रहा है।

देवी देवताओं के अनेक पौराणिक आख्यान नित्य चलते होंगे। तेलिपिनू कृषि देवता था। उसके अदृश्य होने से सारा जग विपत्ति में फंस जाता था। इस कल्पनापर आधारित पौराणिक आख्यान भी प्राप्त हुआ है।

'एक बार तेलिपितू क्रोधित होकर अज्ञातवास में चला गया। उसके क्रोध से और अचानक अदृश्य होनेसे तूफान शुरु हुआ। सब ओर अग्नि ज्वालाएँ उठने लगी। धुवाँ छा गया। भेड, बैल, सारे प्राणी उनके बच्चों को ही ठुकराने लगे। मंदिरों में देवताओं की शक्तियाँ कम होने लगी। पशु पक्षी यहाँ

तक की मनुष्यों की भी प्रजोत्पादन की शक्ति नाश हो गयी। वृक्ष सूख गये। पौधों में चित्ती पडने लगी। अकाल ने तो इतना भीषण रूप धारण किया कि मनुष्य और देवता भी भूखमरी से त्रस्त होने लगे।

यह आपात् स्थिती देखकर सूर्यदेव ने एक सहस्र देवताओं की सभा बुलायी। वरुण देव ने देखा की सभी उपस्थित है परंतु तेलिपिनू नही है। वह क्रोधित होकर गया है। उसके साथ सारी अच्छाई-चली गयी है। सारे देवता तेलिपिनू की खोज में निकल पडे। सूर्यदेवने गरुड को भेजा। उंचे पर्वत शिखरों पर गहरी घाटीयोंमें, काले नीले गहरे पानीयों में सब जगह गरुड ने ढूंढा परंतु तेलिपिनू नही दिखाई दिया। वरुण देव ने देवी खन्नखन्ना (हन्नहन्नास) से कहा, क्या करे हम लोग ? अगर तेलिपिनू नही लौटा तो सब नष्ट होंगे। देवी खन्नखन्ना ने कहा, आपही कुछ करीये' उसका पता लगाइये। वरुण देव अपने नगर से चलने तैयार हो गया तो नगर का द्वार बंद था। वरुण ने अपने वज्र से उसपर प्रहार किये। उस का वज्रही टूट गया। थक कर वरुण देव वही पर बैठ गया। अब देवी खन्नखन्ना ने एक मधुमख्खी को बुलाया। ये मधुमख्खी क्या ढूंढेगी उसको कहकर वरुण देव ने मधुमख्खी को भेजनेका विरोध किया। परंतु देवीने मधुमख्खी को सूचनाएँ दी और कहा, 'जाओ और तेलिपिनू को ढूंढ निकालो। जहाँ भी होगा उस के हाथ पाँव को काटकर उसे जगाओ, मोम से उसे लिप्त करो और यहाँ ले आओ।

तेलिपिनू को मधुमख्खीने अंततः लिझिना नगर के पास हरियाली पर सोया हुआ पाया। मधुमख्खी ने जैसे भी काटकर उसे जगाया वह क्रोध से पागल हो गया। धरती कंपायमान हुई। आकाश में विद्युत कडकडाने लगी। संयोग से देवी कामरूसेपा ने उसे देखा। उसने उसे समझाकर शांत किया। गरुड ने उसे आकाशमार्ग से उस के घर (मंदिर) पहुँचाया। तत्क्षण निसर्ग प्रफुल्लित हुआ। वर्षा होने लगी। खेतों में फसल डोलने लगी। पक्षी आनंद से चहचहाने लगे। सब ओर चैतन्य छा गया। लोग अपने कार्य और कर्तव्य में व्यस्त हुए। राजा रानी प्रजापालन करने लगे।' आख्यान में देवी कामरूसेपा ने जिन मंत्रो से तेलिपिनू का क्रोध शांत किया वे मंत्र है। प्रार्थनाएँ है। आख्यान पूरा होने पर याने तेलिपिनू वापस आनेपर जो धार्मिक विधि हुए उसका भी वर्णन है। खत्ती देश में इस प्रकार के आख्यान, पौराणिक कथाएँ, मंत्र एवं प्रार्थनाएं,

नित्य उपासना इस कारण एक समान धार्मिक आस्था और उस के माध्यम से खत्ती राष्ट्रीयत्व की एकात्म मानसिकता विकसित हुई।

ईश्वर से संवाद

ईश्वर अमर है। शाश्वत है। वह दिखाई नही देता। यही खत्तीओं का धार्मिक विश्वास था। उपासना के लिये मनुष्य के रूप में वे उसकी कल्पना करते थे। ईश्वर सर्वशक्तिशाली है। सर्वत्र व्याप्त है। श्रद्धा, भक्ति एवं सेवाभाव से वह प्रसन्न होता है। अगर उसमें कमी रही तो अवकृपा होती है यह उनकी श्रद्धा थी। इसी कारण उनकी उपासना को भक्ति संप्रदाय का स्वरुप दिखाई देता है। मनुष्य रुप में देखने के कारण स्वामी और सेवक का भाव उनकी अर्चना में प्रतिबिंबित होता है। स्नान, वस्त्र, विलेपन,मालार्पण, अग्नि प्रज्वलन, इस प्रकार के समंत्र उपचार और प्रसाद (नैवैद्य), विविध फल, भोज्य पदार्थ, अनाज आदि का समर्पण उनके नित्य अर्चना में दिखाई देते है। प्रार्थनाओं का महत्व अत्यधिक था। दुःख, विपत्ति के प्रसंग में अनुष्ठान करते थे। सकाम अनुष्ठान था तो कामनासिद्धी की प्रार्थना के साथ संकल्प भी होता था। अगर वह संकल्प पूरा नही किया तो अवकृपा होगी इसपर उनकी श्रद्धा थी।

ईश्वर से संवाद करनेवाले पुरोहित थे। ईश्वर अपनी कृपा अवकृपा, इच्छा, भविष्यकालीन सूचना समाधिवस्था में लीन व्यक्तिद्वारा या सपनों के माध्यम से साक्षात्कार द्वारा प्रकट करता है यह उनका विश्वास था। भविष्यकालीन घटनाओं की पूर्वसूचना प्राप्त करने के लिये तीन प्रकार के माध्यम थे। एक तो जिस पशुको बली बढाया जाता था उस के शरीर के अंदर के अवयवों की जाँच। दूसरा था पक्षीयों की हलचल से प्राप्त संकेत और तीसरा माध्यम था ऐसी स्त्री जिस में दैवी शक्ति का संचारण होता था। किसी विशेष कार्य के प्रारंभ के पूर्व शकुन पाने के लिये पुरोहित देवता से हाँ या ना की भाषामें संवाद करके दैवी संकेत जानते थे। युद्ध का अभियान प्रारंभ करने के पूर्व देवता से भविष्यकालीन सूचना जानने के लिये पुरोहित को पूछा जाता। अगर उत्तर प्रतिकुल आया तो किस कारण देवता का प्रकोप हो रहा है इसका कारण जानने का प्रयास भी किया जाता था। ईश्वर के क्रोध को शांत करने के लिये अनुष्ठान किया जाता था। जादूटोना तो अतीत से आज तक विश्व की सभी सभ्यताओं में

दिखाई देता है। शत्रु का नाश, वशीकरण, भली बुरी कामना की पूर्ति, बीमारी से मुक्ति, धनप्राप्ति इसके लिये मंत्र तंत्र का प्रयोग करनेवाले देवऋषी थे। राजा से लेकर सामान्य व्यक्ति तक समाज के सभी लोग उस पर विश्वास करते थे।

संस्कार विधि

जन्म से लेकर मृत्युतक के अनेक विध संस्कार अवश्य होंगे। परंतु उसका वर्णन नही मिला है। पुत्र जन्म, उसकी शिक्षा, उसका प्रथम युद्ध पर जाना, विवाह ये सभी महत्वपूर्ण प्रसंग थे। ईश्वर की प्रार्थना, वृद्धों का आशीर्वाद और मंदिर में जाकर अर्चना एवं अनुष्ठान तो कियेही जाते थे। राजपरिवार के व्यक्तियों के अंतिम संस्कार के विधि का वर्णन प्राप्त हुआ है। उसपर से कल्पना कर सकते है की जीवन में कई आवश्यक संस्कारों की पद्धति होगी।

दहन पद्धति और दफन पद्धति दोनो प्रचलित थी। दहन पद्धति अधिक लोकमान्य थी। मृत्यु के पश्चात प्रथम दिन ही दहन किया जाता था। तेरह दिन विधि चलते थे। दूसरे दिन स्त्रियाँ अस्थियों को लाने जाती थी। बीस पात्र में लायी हुई मदिरा से अग्नि बुझाते थे। फिर दस पात्र में लाया वाल्ही नामक पेय उस स्थानपर छिटकते थे। चांदी के पात्र से निकालकर बहुमूल्य वस्त्र में रखते थे। वस्त्र में बांधकर एक कुर्सीपर अस्थियाँ रखते थे।

उक्तुरीय (दहनस्थान) पर बारह रोटीयाँ और पदार्थ रखते थे। अस्थियाँ निकालनेके लिये आये हुए सभी को भोजन कराया जाता था। मृतात्मा को तीन बार पेय दिया जाता था। फिर सब को तीन बार पेय देते थे। इस सारी प्रक्रिया में पुरोहित द्वारा मंत्रोच्चार चलते थे। उसके पश्चात उत्तरीय के सामने सूर्यदेवी के लिये एक बैल और नौ भेडों की बली चढाते थे। मृतात्मा के लिये भी एक बैल और नौ भेडों को बली देते थे।

समाधि के लिये बनाये हुए पाषाण गृह में अस्थियाँ लाकर एक शय्यापर रखते थे। उस के सामने दीप जलाया जाता था।१२ आठवे बारहवे और तेरहवें दिन पर धार्मिक विधि होते थे और बली चढाये जाते थे। राजा और राजपरिवार के संबंध में यह वर्णन आता है। खत्ती प्रजा में भी विधि थे। अस्थियाँ और रक्षा एक पात्र में रखकर जमीन में गाड देते थे। बहुत से लोग अपने घरमें या घर के आँगन में ही अस्थियाँ गाड देते थे।

संदर्भ

१. आर्य आक्रमण का सिद्धान्त तथा आर्य द्रविड वंश का सिद्धान्त पूरी तरह से काल्पनिक सिद्ध हुआ है। विस्तृत जानकारी के लिये देखिये। श्रीराम साठे. आर्यन्स व्हू वेअर दे-हैदराबाद १९९०, द आर्यनट प्रॉब्लेम-बंगलोर १९९३ (प्रोसीडिंग ऑफ इंटरनॅशनल सेमिनार १९९१)

२. The Indo European Hittite language was superimposed on the non Indo European Hattian by an invading people. (गुर्ने पृ. १७-१८)

३. जेनोसिस xv १९-२१

४. वही xxiii Exek xvi.3

५. टी.पी.वर्मा - वैदिकजनों का युरोप एवं पश्चिम एशिया में विसंक्रमण-इतिहास दर्पण - नई दिल्ली २००९ पृ. २५-४२

६. यह खतुशिली की प्रदीर्घ प्रार्थना के अंश का भावार्थ है। अनुवाद नही। अंग्रेजी अनुवाद इंटरनेट पर उपलब्ध है। (http://www.hittites info / history.text middle empire)

७. गुर्ने पृ.१४०

८. गर्स्टंग - द हिट्टाइट एम्पायर-पृ. लंडन १९२९

९. खत्ती मंदिर-गुर्ने १४५-१४७ सेटन लॉईड १३४,१३६ वुली १३६,१३७

१०. गुर्ने पृ. १५५

११. वही १५६

१२. अलका हुयुक में समाधियाँ मिली है। सेटन लॉईड-पृ ९६-१००, लिओनार्ड वुली पृ.१३६,१३७

४.
खत्ती राष्ट्र-
शासन, न्यायव्यवस्था, अर्थव्यवस्था, भाषा, सहित्य,कला

खत्ती शासन

पट्टरानी का पुत्र राज्य का उत्तराधिकारी बने। अगर प्रथम श्रेणि का राजपुत्र ना हो तो दूसरी रानी के पुत्र को राज्यपद प्राप्त हो। अगर वह भी नही होगा तो प्रथम श्रेणि का जामात (पट्टरानी से हुए कन्या का पति) राज्य का उत्तराधिकारी होगा।

खत्ती नरेश तेलिपिनू (१५२५-१५००) ने उत्तराधिकारी चुनने की आचार संहिता बनायी। उसमें यह घटनात्मक मार्गदर्शक तत्व था। खत्ती साम्राज्य के अंत तक उसका पालन होता रहा। अन्यथा तेलिपिनू के राज्यारोहन तक साम्राज्य उत्तराधिकारी की समस्या से ग्रस्त था। राजपरिवार में कटकारस्थान चलते थे। महत्वाकांक्षी राजपरिवार की स्त्रियाँ, उन के रिश्तेदार, शक्तिशाली सामंत, राजा की एक से अनेक रानीयाँ होने के कारण अनेक राजपुत्र इस के कारण खत्ती राज्य में संघर्ष होते थे। खत्ती राज्य की शक्ति बट जाती थी। सामंत, स्वाधीन राज्य उसका लाभ उठाकर विद्रोह करते थे। हत्याएँ चलती थी। तेलिपिनू की विधिसंहिता के बाद इसपर अंकुश लग गया।[१]

खत्ती नरेश स्वयं को को तबर्न अर्थात महान राजा (महाराजा) कहलाते थे। प्रथम खत्ती सम्राट लबर्न का नाम धारण करने में उन्हें गौरव की अनुभूति होती थी।[२] राजा को सूर्यपुत्र समझा जाता था। मृत्यु के पश्चात राजा को ईश्वरपद प्राप्त होता है यह कल्पना थी। राजा की सहाय्यता के लिये राजसभा थी। मंत्री परिषद थी। प्रत्यक्षतः प्रशासन,न्याय, लष्कर, परराष्ट्र व्यवहार सभी सर्वोच्च अधिकार राजा के थे। महारानी का अपना स्वतंत्र स्थान था। प्रथम खत्ती नरेश लबर्न की पत्नी का नाम तवन्नना था। खत्ती महारानीयों की वह गौरवशाली उपाधि बन गयी। जब तक महारानी (तवन्नना) जीवित है तब तक अन्य किसी रानी को यह प्रतिष्ठा नही मिलती थी। उस के मृत्यु के पश्चात ही

राज्यारूढ राजा की रानी तवन्नना कहलाती थी। प्रशासन में तवन्नना की महत्वपूर्ण भूमिका थी। राजनीति में उसका सहयोग होता था।[३] राजकन्याओं के विवाह प्रतिष्ठित राजकुल में किये जाते थे। प्रायः जामातों को राजपरिवार की सदस्यता प्राप्त होती थी। राजपरिवार की सदस्यता प्राप्त होना केवल सन्मान और प्रतिष्ठाका ही विषय नही। महत्वाकांक्षा और उच्च पद की प्राप्ती का अवसर देनेवाला विषय था। खत्ती नरेश झिदन्त प्रथम और अलुवम्न जामात थे तो खंतिली प्रथम और तलिनिलू बहनोई थे। उनको राजपरिवार की सदस्यता प्राप्त थी और वे खत्ती परिवार का घटक माने जाते थे।

खत्ती साम्राज्य विशाल था। पश्चिम एशिया के लगभग दस लाख चौरस किलोमीटर भूप्रदेश में फैला हुआ था। इसमें कतिपय, साम्राज्य के अधीन राज्य थे। विजित प्रदेशपर और अधीन राज्यों में खत्ती शासक नियुक्त किये जाते थे। इसके अलावा अलेप्पो, कर्केमि जैसे स्थानपर तो राजपदका ही निर्माण किया गया था। राज्यपाल ओर शासक के पदपर राजपुत्र या राजपरिवार के सदस्य शासक के नाते नियुक्त होते थे। राज्य के प्रशासक के लिये अनेक उच्च पद के अधिकारी भी नियुक्त होते थे। इन अधिकारियों के अधिकार में भी उनके सेना पथक थे। युद्ध के अभियान पर जब राजा निकलता था तब अधीन राज्यों के लिये उनके सेनापथक खत्ती सेना के साथ भेजना अनिवार्य था।

खत्ती सेनाओं की शक्ति हलके अश्वचालित रथदल में थी। रथ हलके और तीलीयुक्त दो पहियेवाले और वेगवान थे। रथ में सारथी के अलावा दो योद्धा रहते थे।[४] शूल (भाला), धनुष्यबाण, खंजर ये योद्धाओ के हथियार थे। आयताकृति या चतुर्भुजी ढाल का उपयोग भी वे सुरक्षा के लिये करते थे। प्रायः वसंत और ग्रीष्म ऋतु में सामरिक अभियान लिये जाते थे। हेमंत ऋतुमें हिमवर्षाव और भयंकर शीत वायु के कारण युद्ध चलाना असंभवसा होता था। आक्रमक युद्ध में रथदल अधिक उपयुक्त था। शत्रुओं के नगर और दुर्ग जीतने के लिये घेराबंद करते थे। खत्ती राष्ट्र में सभी प्रमुख नगर तथा सीमावर्ति स्थानों पर दुर्गों का निर्माण किया हुआ था। खत्ती राजधानी खत्तीनगर भी पहाडीयों में था और एक मजबूत दूर्ग के रूप में उसका निर्माण किया हुआ था। दुर्गपर चतुर्भुजाकार तोरणों से युक्त पाषाण की दोहरी प्राचीर थी।

प्राथमिक खत्ती राजाओं के लिये शत्रुओं के नगरोंपर आक्रमण करना और उन्हे लूट लेना साधारण बात थी। परंतु खत्ती नरेश परिवर्तनशील थे। युद्ध के अभियान पर निकलने के पूर्व युद्ध का प्रयोजन और योजना निश्चित होती थी। विद्रोह शमन, राज्य विस्तार और सीमा सुरक्षा ये प्रमुख उद्देश रहता था। खत्ती नरेश मुवतल्ली और मिश्री नरेश राम द्वितीय इनमे बीच कादेश का युद्ध हुआ। मिश्री सेनाने अमुरू पर कब्जा किया हुआ था। मिश्री सेना को हटाकर फिरसे अमुरू पर कब्जा करना और खत्ती अधिपत्य सीरिया में कायम रखना इस उद्देश से ही मुवतल्ली इस युद्ध पर निकला था। अभियान पर निकलने के पूर्व ही युद्ध का हेतु उसने स्पष्ट किया था। उसने शपथ ली थी (कहा था), ''हे ईश्वर, अगर आप सभी देवताओं की कृपा रही तो जिस अभियान पर खत्ती नरेश (My Sun) आ रहा है, अवश्य ही अमुरू पर विजय प्राप्त करेगा; अमुरू नरेश को मैं बंदी बनाऊंगा या वह शरणागत होकर शांती का प्रस्ताव (मेरे सामने) रखेगा। ... सभी देवताओं को मैं (फिर) उपहार समर्पित करूंगा।''

पश्चिम एशिया की सब सत्ताओं के लिये यह संघर्ष युग था। साम्राज्यों के लिये अन्य कोई सत्ता अपनेसे जादा शक्तिशाली ना बने यह चिंता रहती थी। खत्ती साम्राज्य में इसी कारण अधीन राज्य, विजित भूप्रदेश के शासक इनके साथ संधि की जाती थी। यह आंतरदेशीय एवं आंतरराष्ट्रीय करारनामों का युग था। मिश्र और खत्ती राष्ट्र के आंतरराष्ट्रीय संबंध एवं करार यह वैशिष्ट्यपूर्ण ऐतिहासिक घटना थी। मिश्र के लिये यह नयी बात थी। इसापूर्व १२५९ में मिश्री नरेश राम द्वितीय को चांदीकी पटियापर उत्कीर्ण संधिपत्र प्राप्त हुआ तब उसने बडे उत्साह के साथ कोरनाक के मंदिर में दीवारपर उसे उत्कीर्णित कराया। दोनो राष्ट्रों के लिये यह बंधुभाव का संधि पत्र था।

न्याय व्यवस्था

बोधाज कुई में प्राप्त अनेक अभिलेख अधिकांशतः खण्डितावस्था में मिले है। फिर भी दो दीर्घ अभिलेख अभग्न रूपमें प्राप्त हुए है उसपर खत्ती विधिसंहिता है। इस में दो सौ धाराएँ है। खत्ती कानून सुधारित किये जाते थे। 'पहले एक विशिष्ठ दण्ड इस अपराध के लिये था परंतु अब उस में राजाने यह परिवर्तन किया है' इस प्रकार का वर्णन हम पाते है। कही पर नये कानून जोडे

हुए दिखाई देते है। जमीनदारी, खेती संबंधी व्यवहार, जायदाद, सेवा चाकरी, घरमालकी, वारसाहक्क, पशुधन संबंधी व्यवहार, चोरी डकैती, लूट, हत्या, अपघात, दास्यतासंबंधी शिकायते इस प्रकारके सभी सामाजिक विषयों के कानून और दण्डविधि, संहिता में सम्मिलित है। विवाहसंबंधी नियम, धार्मिक अधिकार और निधि, खरेदी विक्री व्यवहार इनके भी कानून बनाए हुए थे। अपराध संबंधी (क्रिमीनल) और समाज एवं नागरिक संबंधी (सिव्हिल) स्वतंत्र कानून एवं दण्ड विधान बनाये हुए थे।

खत्ती साम्राज्य के सभी प्रमुख नगरों में शासकीय मण्डल थे। ज्येष्ठ व्यक्ति इस मण्डल के सभासद होते थे। इस मण्डल पर प्रांतीय प्रशासकीय प्रतिनिधित्व करनेवाला एक अधिकारी भी सदस्य नियुक्त किया जाता था। वह स्थानिक मण्डल को सहयोग देता था। रिकार्ड रखता था। स्थानिक स्तर के सभी मुकदमे हल करने का अधिकार इस न्यायालय को था। छोटे गाँव के देहात के मुकदमे भी पासके नगर के न्यायालय में सुलझाए जाते थे। जादूटोना संबंधी मुकदमा, बडी चोरी डकैती, मृत्युदण्ड देने लायक अपराध, नरहत्या, इस मामले में गंभीर मुकदमे राजा के पास भेजे जाते थे। किसी भी अपराध में गहराईसे छानबीन यह खत्ती न्यायपद्धति की विशेषता थी। राजाज्ञा और नगर न्यायालय का निर्णय इसके विरोध में अगर अवज्ञा की गयी तो अवज्ञा के लिये कडी सजा दी जाती थी। न्याय के संदर्भ में कई सूचनाएँ पटियों पर प्राप्त हुई है। राजा के अर्थात शासकीय प्रतिनिधि को दी गयी सूचनाएँ स्पष्ट एवं निश्चित रूप की दिखाई देती है।

''जिस किसी नगर में आप (शासकीय प्रतिनिधि) जाएंगे वहाँ के सभी लोगों को एकत्र करोगे। जिसकी जो शिकायत होगी, उसका समाधान करोगे। किसी व्यक्तिका दास या घर का स्त्री या पुरुष सेवक कोई शोकसंतप्त स्त्री इन की शिकायत (मालिक के विरोध में) आ गयी तो उन का भी समाधान करो। किसी मुकदमे को खराब ना बनाओ या खराब (झूठे) मुकदमे को अच्छा (सच्चा) मत बनाओ। निःपक्षपाती रहकर जो न्यायसंगत है वही करो।''

खत्ती दण्ड विधान प्रगतिशील और उदार दृष्टिकोण रखनेवाला था। उस काल में 'जैसे को तैसा' सिद्धान्त नैसर्गिक था। एक प्रतिशोध की भावना इसके पीछे थी। शत्रुता परम्परागत रूप से चलती थी। खत्ती दण्डविधान की

मान्यता यह थी कि एक अपराध का प्रतिकार दूसरा अपराध करना नही है। उस काल में अपराधियों के साथ उसके संबंधियों अथवा उसके ग्राम निवासियों को दण्डित करना न्याययुक्त माना जाता था। इस प्रकार के सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत की कठोरता खत्ती न्याय व्यवस्था में न्यूनतम थी। मुख्य अपराध की सूचि में बलात्कार, राजानुशासन का विरोध, दासों के लिये स्वामी की आज्ञा का पालन न करना इत्यादि अपराध थे।

मृत्युदण्ड केवल आठ अपराधों के लिये था। शत्रुपर जादू टोना, पशुओं के साथ सहवास, राजप्रासाद में चोरी करना, राजविद्रोह ऐसे अपराधों के लिये मृत्युदण्ड था।

अर्थव्यवस्था

अनातोलिया की जलवायु अनुकुल नही थी। जाडे के दिन में उत्तर से आनेवाले चक्रवात के साथ ही हिमवर्षाव प्रारंभ होता था। वसंत और ग्रीष्म ऋतु में कडी धूप रहती थी। वर्षा ऋतु में तौरस पर्वतों की ढलान पर और सागरतट के पहाडियों में बारिश होती थी। पर्वत की पहाडियाँ प्रायः बंजर थी। कप्पाडोशिया के उत्तर का खत्ती भूमि का हेली नदी के घाटी का प्रदेश समृद्ध प्रदेश था। परंतु हरी भरी घाटियों को भी काटनेवाले भयंकर शीत वायु से संरक्षण नही था। पहाडी पर और उँचे प्रदेश पर ना वृक्ष थे ना वनस्पती। फिर भी खत्ती देश कृषिप्रधान ही था। गेहू और जौ प्रमुख उत्पादन था। गेहूँ रोटी और मदिरा के लिये काम आता था। अंगुर, मूंगफली, सेव आदि का उत्पादन भी होता था। जैतुन से खाद्यतेल बनता था।

भूमि का महत्व अत्यधिक था। अतिकांश भूमि राजाओं के अधिकार में थी। मन्दिरों की व्यवस्था में भी पर्याप्त भूमि रहती थी। वह मंदिरों के आय का साधन था। जमीनदार और जहागीरदारों का भी बडा वर्ग था। वे लगान पर भूमि देते रहते थे। जो भूमि किसी व्यक्ति को या मंदिर को राजा की ओर से दान या भेंट में प्राप्त होती थी, उस को बेचा नही जा सकता था। व्यक्ति मर जाने पर उसको राजकृपा से प्राप्त भूमि राजा को वापस दी जाती थी। कृषिप्रधानता के कारण पशुपालन भी महत्व रखता था। पशुधन की कल्पना थी। चांदी का चलन तो था परंतु साथ में पशु की संख्या में भी खरीद विक्री के व्यवहार होते थे। कृषि

के लिये विशेष करके बैल का उपयोग था। हल को चलानेवाले बैल की कीमत सबसे अधिक १५ शेकेल थी।[४] छोटा चलन सीसे का चलता था। अश्व पालन तो पश्चिम एशिया को खत्ती सभ्यता की ही देन थी। गधा, खच्चर, भेड इनका समावेश भी पशुधन में होता था। खत्ती विधिसंहिता में भेड, बकरी, खाद्यान्न, मांस, भूमि इन सब आवश्यक वस्तुओं के राज्यद्वारा निर्धारित मूल्य दिये हुए है। एक भेड का मूल्य एक शेकेल था। बकरी का दो तिहाई शेकेल था। एक गौ का मूल्य सात शेकेल था। नीले रंग का ऊनी वस्त्र बीस शेकेल तो साधारण खमीस का मूल्य तीन शेकेल था।

अनातोलिया खनिज पदार्थ से समृद्ध था। चांदी और तांबे की खाने थी। लोहे की भी खाने थी। ताम्र और लोहा निर्यात होता था। लोहे के उपकरण बनाते थे। परंतु ताम्र और कास्य का प्रयोग अधिक था। लोहे की तलवार और देवमूर्तियों का उल्लेख तो मिलता है। तथापि वे बहुमूल्य पदार्थों के रूप में मंदिरों में अथवा राजाओं के पास में थे।[५] पडोसी देश के साथ घनिष्ठ व्यापारी संबंध थे। ताम्र का निर्यात होता था। बाबिलोन से वस्त्र और टिन मँगाये जाते थे। गणेश (कणेश) नगर में असुरी व्यापारियों का जो उपनिवेश था उससे दिखाई देता है कि व्यापारियों के निगम थे और विदेशी व्यापार समृद्ध था।

खत्ती भाषा एवं लिपि

खत्ती भाषा के संदर्भ में विद्वानों की सहमती नही है। खत्ती राष्ट्र के उदय के पूर्व अनातोलिया में जो स्थानिक भाषा थी उसे वे 'नॉन इंडो युरोपियन' भाषा मानते है। उस भाषा को उन्होंने खत्तीक भाषा नाम दिया है। खत्तीक भाषा आर्मेनाइड भाषा से संबंधित बताते है। भारोपीय (इंडो युरोपीय) लोगों ने खत्ती पर आक्रमण किया और खत्ती लोगोंने उनका शासक के नाते स्वीकार किया। परकीय भारोपीय शासकों का खत्तीकरण हो गया और खत्तीक भाषा का भारोपीयकरण हुआ यह पाश्चात्य विद्वानों का सिद्धान्त है। दूसरा एक सिद्धान्त यह है कि प्राग् खत्ती भाषा और प्राग् भारोपीय भाषा इन दोनो भाषाओं के पूर्व 'इंडो हित्ती' याने भारतीय खत्ती भाषा थी। खत्ती भाषा का व्याकरण भारोपीय भाषा से संबंधित है परंतु बहुतांश शब्द संग्रह मूल स्थानिक भाषा का माना जाता है। अब सारे सिद्धान्तों से कुछ भी निष्कर्ष नही निकलता।

मूलतः युरोपीय भाषाओं पर संस्कृत भाषा का जो स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है उस कारण केवल भारोपीय नामक एक काल्पनिक भाषा और वह भाषा बोलनेवाला 'इंडो युरोपीयन' मानव समूह यह कल्पना की गयी। संस्कृत भाषा प्राचीन, शास्त्रशुद्ध, पूर्ण विकसित और समृद्ध है। इसको स्वीकार न करने के कारण अन्य काल्पनिक भाषा के सिद्धान्त को रखा गया। इरानी भाषापर संस्कृत भाषा का प्रभाव है। यही बात सुमेरियन एवं पश्चिम एशिया की उस समय की भाषाओं पर लागू होती है। संस्कृत भाषा और भारतीय संस्कृति का पश्चिम एशिया और युरोप की सभ्यताओं पर जो प्रभाव प्राचीन काल में दिखाई देता है उसे स्वीकार नही करेंगे तो चर्चा निरर्थक होगी। तथ्यपरक निष्कर्ष तक पहुँचने के सभी मार्ग इस अस्वीकार के अभिनिवेश से कुण्ठित हो जाते है।

१९१९ में इ. फोरर ने उसके संशोधन का निष्कर्ष घोषित किया कि बोघाजकुई में प्राप्त कीलाक्षरी अभिलेखों में आठ अलग अलग भाषाएँ है। अर्थात् सभी भाषाओं का प्रचलन था ऐसी बात नही थी। शासकीय अभिलेख एवं व्यवहार में खत्ती और अक्कादी भाषा का उपयोग किया जाता था। हरी (मितन्नि) भाषा का भी प्रचलन पर्याप्त मात्रा में था। सुमेरी भाषा का व्यवहार सीमित होते हुए भी उसका अध्ययन होता था। धार्मिक विधि के अभिलेख में लुइली (लुवियन) भाषा का भी प्रभाव दिखाई देता है। बोघाजकुई के अभिलेख प्राप्त होने के पूर्वही खत्ती राष्ट्र के संदर्भ में अक्कादी भाषा के अभिलेखों से काफी जानकारी प्राप्त हुई थी। बाबिलोनी और असुरी भाषा को ही 'अक्कादी भाषा' नाम दिया गया है और इस भाषाका प्रयोग खत्ती शासन में शासकीय पत्रव्यवहार, राजाज्ञाएँ और अधिकृत शासकीय दस्तऐवजों में किया जाता था।

झेक स्कॉलर बी-रोझनी का संशोधन था कि भारोपीय भाषा के साथ खत्ती भाषा का संबंध था। १९१५ में रोझनी की इस कारण बडी आलोचना की गयी थी। परन्तु सभी आलोचकों को बाद में यह बात माननी पडी। प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी और षष्ठी विभक्ति का उपयोग खत्ती भाषा में किया जाता था। शब्द के साथ विभक्ति प्रत्यय लगता था।

जैसे खुमंत (humant) यह विशेष नाम - खुमंतन (humant-an) - खुमंत को (द्वितीया, चतुर्थी विभक्ति) खुमंत (इ) त (humant-H) खुमंत ने

(तृतीया), खुमंतस (humant-as) खुमंत से - खुमंत द्वारा (पञ्चमी) खुमंत ज (humant - as) खुमंतका (षष्ठी) इस प्रकार (s, as, it) आदि प्रत्यय शब्द को संयुक्त होकर आते थे। सर्वनाम के साथ आनेवाले प्रत्यय से भी सर्वनाम का रूप बनता था। मु (mu) - मुझे, त (ta) - तुझे, सि (si) - उसे ये सर्वनाम थे। लॅटिन में मि (संस्कृत मां, मा), ते (संस्कृत त्वां), से (संस्कृत तस्मै) ये सर्वनाम दिखाई देते है। सभी भारतीय भाषाओं में व्यंजन के वर्गों में एक समान संकल्पना है। क, ट, त और प वर्ग में तीसरे व्यंजन का उपयोग समानार्थी होता है। क और ग, ट और ड, त और द, प और ब इन व्यंजनों का परस्पर पर्यायी उपयोग करने से शब्द का अर्थ बदलता नही है। अर्थात् सभी शब्दों के लिये यह नियम नही है। उसी प्रकार खत्ती भाषा के शब्दों के उच्चारण में पर्यायी व्यंजन दिखाई देते है। जैसे कणेश - गणेश, सुप्पिल्युलिमा-सुब्बिल्युलिमा, तुधलीय - दुधलीय आदि संज्ञाओं के उच्चारण से अर्थविभ्रम नही होता। कुछ विशेष नाम खत्ती भाषा में ऐसे दिखाई देते है जिनको अव्यय या प्रत्यय से जोडकर स्थलनाम सिद्ध होता है। दत्त या दत्तस खत्ती देवता का नाम है आरसीय या अस्सस प्रत्यय से दत्तस्स्स यह स्थलनाम बन जाता है। खत्तुश शब्द से खत्तुशश यह स्थलनाम सिद्ध होता है। तर्खुंद देवता का नाम है। तर्खुंदस्य स्थलनाम है।

हरी भाषा (हुरियन)

खत्ती धार्मिक साहित्य में हरी भाषा में लिखे हुए अनेक परिच्छेद है। गिल्गमेश महाकाव्य के हरी अनुवाद के अंश प्राप्त हुए है। मितन्नि नरेश दुशरट्ट (दशरथ) ने मिश्र नरेश अमेनोफीस तृतीय को लिखा हुआ पत्र तेल एल् अमर्ना (मिश्री नरेश अख्नेतेन की राजधानी) के अवशेषों में मिला। लगभग पांच सौ पंक्तियोंका यह पत्र हरी भाषा में है। उससे भी पहले के हरी अभिलेख (इसापूर्व-१७५०) युफ्रेट नदी की मध्य घाटी में मारी और तेल हारिरी में तथा सीरिया के सागरतट पर रस शर्मा (उगा रित) में मिले।

कश्यप सागर के दक्षिण में पहाडी प्रदेश है। उसे हरी लोगोंका मूल प्रदेश माना गया है। अर्थात् गांधार (अफगाणिस्तान) के मार्ग से मध्यआशिया में जाकर कश्यप सागर के दक्षिण में निवास करनेवाले हरी

भारतीय थे। भाषाविज्ञान की परिभाषामें उनको इंडोयुरोपीय कहा गया है। लगभग २३०० इसापूर्व में वे दक्षिण और पश्चिम दिशा में फैले। युफ्रेट की उपरी घाटी में उनके अनेक राज्य स्थापित हुए। मितन्नि राष्ट्र भी हरी सभ्यता का आविष्कार था।

मिनन्नि राष्ट्र की भाषा हरी भाषा थी। हरी भाषा संस्कृत भाषा से निकली प्राकृत भाषा थी। मितन्नि एवं खत्ती राष्ट्र में जो संधिपत्र बना हुआ था उसमें वैदिक देवताओं की शपथ दिलाई है।[७]

प्राकृत – इलानि मित्र आश्शीइल। इलानि वरुन आश्शिएल।
इलु इनदर। इलानि नासत्तियन।
संस्कृत–इलानि मित्रःअस्मत् इलः। इलानि वरुणः अस्मत् इलः।
इल इन्द्रः। इलानि नासत्यानि।

मितान्नि राष्ट्र में अश्वविद्या पर रचित ग्रंथ था। किक्कुलि नामक कविद्वारा रचित इस ग्रंथ में अश्वविद्या के कुछ तांत्रिक शब्द थे जो पटियाँ पर प्राप्त हुए है। मूल ग्रंथ मिला नही है। परंतु जो शब्द मिले है वे अश्वविद्या के नियमित अध्ययन की ओर निर्देश करते है।

प्राकृत (संभवतः हरी भाषा)	ऐक वर्तन्न	संस्कृत–एक वर्तनम्
	तेर वर्तन्न	त्रि वर्तनम्
	पंज वर्तन्न	पञ्च वर्तनम्
	सत्त वर्तन्न	सप्त वर्तनम्
	नवर्तन्न	नव वर्तनम्

खत्ती भाषापर हरी भाषा का प्रभाव नैसर्गिक बात थी। पश्चिम एशिया का संबंध युरोप से नही था। ना कोई ऐसी सभ्यता युरोपीय भुमिपर उस समय थी जो पश्चिम एशिया को प्रभावित कर सके। ना कोई ऐसा मानवसमूह था जो पश्चिम से पूर्व की ओर स्थलांतरित हो।

पश्चिम एशिया में चित्रलिपि प्रचलित थी। खत्तिक भाषा बोलनेवालों ने भी अपनी चित्रलिपि बनायी। उसमें लगभग दो सौ अक्षरचिन्ह थे। मेरिगि के अनुसार चार सौ उन्नीस प्रतिक चिन्ह थे। ये प्रतिकचिन्ह अंशतः चित्राक्षर सूचक और अंशतः ध्वनिसूचक थे। सबसे पुराना खत्ती अभिलेख लगभग इसा पूर्व १५०० का है। चित्रलिपि में अधिकांश प्राप्त अभिलेख उत्तर सीरिया में मिले

है। अभिलेख का प्रारंभ दाहिनी ओरसे होता है। दूसरी पंक्ति बायी ओरसे प्रारंभ होती है तो अगली पंक्ति फिरसे दाहिनी ओरसे उत्कीर्णित करते थे।[८] खत्ती चित्रलिपि पर सायस और राईट इन दोनों ने पहले काम किया। उनके पश्चात भी बहुतसे विद्वानों ने उसपर काम किया। फिर भी सभी विद्वान चित्रलिपि के वाचन पर सहमत नही है। क्रीट की लिपि से खत्ती चित्रलिपी का साम्य कुछ मात्र में दिखाई देता है। खत्ती इतिहास के विद्वान रोझनी के मतानुसार संभवतः खत्ती चित्राक्षर लिपि का उद्‌गम इसापूर्व तीसरी सहस्राब्दि में हुआ और उसका संबंध सिंधु लिपि से हो सकता है।[९] पश्चिम एशिया में बाबिलोन की कीलाक्षर लिपि आंतरराष्ट्रीय लिपि थी। इसी कारण खत्ती राष्ट्र में भी शासकों ने खत्ती भाषा के लिये कीलाक्षर लिपि का उपयोग प्रारंभ किया। राष्ट्रीय लिपि का स्तर उसे प्राप्त हुआ।

खत्ती साहित्य

कीलाक्षर अभिलेखों के माध्यम से खत्ती साहित्य की जानकारी प्राप्त होती है। साहित्यिक दृष्टि से केवल धार्मिक साहित्य, आख्यान, पौराणिक कथाएँ, प्रार्थनाएँ इतनाही साहित्य महत्वपूर्ण नही है – तो खत्ती शासकीय पत्रव्यवहार, राजाज्ञा, संधिपत्रक, प्रासंगिक घोषणा पत्र इस प्रकारका विपुल साहित्य उपलब्ध हो गया है।

राजकीय साहित्य में खत्ती सम्राटों के कतिपय भाषण संग्रहीत है। खत्तीशील प्रथम ने सभा के सम्मुख दत्तकपुत्र मुर्शिली प्रथम को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया उस समयका उसका पूरा भाषण खत्ती साहित्य का उत्कृष्ठ नमुना है। इतिहास, भूतकालीन घटनाएँ, निरंतर बदलती राजनैतिक स्थिती, वर्तमान कालीन समस्याएँ, भविष्यकालीन चिन्ताएँ इनका चित्रण ही उसके व्याख्यान में आता है। मनुष्य की भाव भावनाएँ, अपेक्षाएँ, मानसिक तनाव, हृदयस्पर्शी संवाद इनका सुंदर आविष्कार उसमें प्रकट होता है। (पृष्ठ २४ देखिए) खत्ती अभिलेखों में इतिहास के प्रति विशेष रूचि प्रकट की है। खत्ती नरेशों के भाषण और घोषणा पत्र इसी कारण खत्ती इतिहास के साधन बन गये है। सामन्तों को पत्र भेजते समय दोनो पक्षों के पीछले संबंधों का इतिहास दिया जाता था। राजकीय अभिलेख शासकों की सफलता का पूरा वृतान्त देते

है। खत्तीशील तृतीय का अभिलेख तो खत्ती इतिहास का एक स्वर्णिम पृष्ठ अंकित करता है। यह तो महान् खत्तीशील का आत्मचरित्र ही है। बाल्यावस्थासे लेकर अभिलेख लिखे जाने तक का उसका जीवनवृत्तान्त उसमें आया है। प्राचीन सभ्यताओं में और कही भी इस प्रकार के अभिलेख नही है। खत्ती और मित्र राष्ट्र में जो संधिपत्र बनाया गया वह बनानेवाले खत्ती राजनैतिक अधिकारी भी अभिजात साहित्यिक थे ऐसा लगता है। मिश्र नरेश राम द्वितीय उसे पढकर इतना प्रसन्न हुआ था कि कोरनाक के मंदिर की दीवार पर उसने उसे उत्कीर्ण कराया।

खत्ती साहित्य में पौराणिक साहित्य अधिक प्रमाण में होगा। परंतु दुर्भाग्यसे पौराणिक कथाऐं और आख्यान प्रकट करनेवाले अधिकांश अभिलेख खण्डितावस्था में मिले है। जो भी प्राप्त हुए है उनका वैशिष्ठ है 'मनोरंजक कथा वस्तु' । बहुत से हरी आख्यान भी खत्ती साहित्य में सम्मिलित थे। गिल्गमेश जैसे बाबीलोनी आख्यान का भी खत्ती अनुवाद हुआ था। उत्सवमें पौराणिक आख्यान होते थे। गांव गांव में मन्दिर थे। मन्दिरों में ईश्वर के दर्शन और अर्चना के हेतु लोग आते थे। मन्दिरों की व्यवस्था में पुरोहित वर्ग होता ही था। शकुन देखने के लिये मंगत बोलने के लिये लोग मन्दिर में जाते रहते थे। ईश्वर से संवाद करनेवाले पुजारी और उनका संवाद भी खत्ती साहित्य में महत्व रखता है। दास्य भाव से ईश्वर की प्रार्थनाएँ करनेवाले लोगों का भक्तिभाव भी साहित्यिक दृष्टि से प्रार्थना में प्रकट होता है। मुवतल्ली संकटग्रस्त था। राजनैतिक दृष्टि से भी पीडित था। ईश्वर की प्रदीर्घ प्रार्थना करते हुए वह उसकी व्यथा प्रकट करता है। उसमें करूण रस तो है ही। उस के साथ ही उपमा, उत्प्रेक्षा जैसे अलंकारिक भाषा का प्रयोग दिखाई देता है।

धार्मिक आख्यानों में 'सर्पासुर का वध' और 'लुप्त देवता तेलिपिनु' ये आख्यान प्रसिद्ध है। इन दोनो आख्यानों के कई संस्करण प्राप्त हुए है। इस प्रकार के आख्यान मन्दिरों में नित्य सुनाए जाते थे। खत्ती साहित्य में वैज्ञानिक साहित्य भी होगा इस का संकेत किक्कुली के अश्वविद्या पर के ग्रंथ से तथा कुछ बाबीलोनी ग्रंथों के खत्ती अनुवाद से प्राप्त होता है।

खत्ती कला

पूर्व खत्ती काल की कला का प्रथम आविष्कार इसा पूर्व तीसरे सहस्रक के काल का है। मध्य अनातोलिया में अलका हुयुक में अनेक समाधियाँ उत्खनन में मिली। चांदी की और ब्राँझ की प्राणियोंकी प्रतिमाएँ, सुवर्णों के पात्र और अलंकार तथा कतिपय तश्तरियाँ वहाँ पर प्राप्त हुई। ये तश्तरियाँ सूर्यगोल की प्रतिकरूप है। कुछ तश्तरियों पर पवित्र पशु बारहसिंगा की प्रतिमाएँ है। ज्योमितिय नक्काशीवाले वर्तुलाकार शरीर पर लंबी ग्रीवा और शिरवाली ये प्रतिमाएँ उन काल के देवता के प्रतिक होंगे। जिसपर ज्योमितिक चित्र है ऐसे हस्तनिर्मित मृदभाण्ड उस समय की सर्वोत्तम कलाकृतियाँ है। खत्ती साम्राज्य के काल में इन मृद्भाण्डों का स्थान धातु के पात्रों ने लिया।

गणेश के उत्खनन में पाषाण की दण्डगोल मुद्राएँ मिली। गणेश में असुर व्यापारियों का उपनिवेश था। दण्डगोल मुद्राओं का उपयोग व्यापारी करते होंगे। इन मुद्राओं पर अनातोलिया के बैल जैसे पवित्र पशु दिखाई देते है। मुद्राओं पर बाबिलोनी कला का प्रभाव दृग्गोचर होता है। बोधाजकुई में ब्राँझ की मनुष्य प्रतिमा मिली जिस का काल दो हजार इसा पूर्व का है। मुद्राओं में शंकु के आकार की एवं घन आकार की भी मुद्राएँ है। राजा और रानीयों के नामसहित प्रतिमाएँ जिसपर है ऐसी मुद्राएँ प्रायः सभी राजाओं की मिली है। राजमुद्राओं पर राजा का राजचिन्ह और उपर पक्षयुक्त सूर्य चक्र है। अन्य मुद्राओं पर चित्राक्षर लिपि में अभिलेख अथवा किसी देवता या उसके प्रतिक का चित्र अंकित है।

खत्ती नगर (खत्तुसस)

खत्ती साम्राज्य की राजधानी खत्तीनगर पश्चिम एशिया का प्रथम पाषाण-प्राचीन-युक्त नगर था। समुद्र से तीन हजार फीट उँचे पठारपर एक पहाडीपर यह नगर था। इसकी लम्बाई २२०० मीटर और चौडाई ११०० मीटर थी। चारो ओर दोहरी प्राचीर थी। मुख्य प्राचीन दोनो ओरसे पत्थर की बनी थी। उसके मध्य में पत्थर के टुकडे भरे हुए थे, परंतु बाहरी बाहरी दीवार विशाल पाषाणखंडो से मजबुत बनायी हुई थी। यह प्राचीर ५५०० मीटर लंबी थी। उससे बीस फीट की दूरी पर लघु प्राचीर थी। दोनो प्राचीरों पर सौ सौ

फीट की दूरी पर चतुर्भुज तोरण (बुर्ज) बनाए थे। मुख्य प्राचीर में तीन प्रवेशद्वार थे। इन के अतिरिक्त शत्रुपर अचानक आक्रमण करने के किये गुप्त द्वारों का प्रबन्ध था। खत्ती नगर एक मजबुत दुर्ग के रूप में ही बना हुआ था। खत्ती कला का एक सुंदर आविष्कार दुर्गद्वार पर उत्कीर्ण द्वारपाल के रुप में सामने आता है। उसके मस्तकपर खत्ती मुकुट है,जैसा शिरस्त्राण है। कमरपर कमरपट्टे से कसा हुआ घुटने के उपर तक का कटिवस्त्र है शिरस्त्राण पीछे ग्रीवापर और बाजू में दोनो कान को आच्छादित करता है। एक हाथ में छोटा खड्ग और दूसरे हाथ में कुल्हाडी है।

द्वारपाल खत्ती योद्धा की प्रतिकृति है। योद्धा के समान ही एक प्रतिकृति ब्रांझ की भी मिली है। सुवर्ण की एक सुंदर प्रतिमा जो आकार में छोटी है परंतु खत्ती सुवर्णकारो की कुशल कारागिरी प्रकट करती है वह भी योद्धा की है।[२०] खत्ती नगरों की और एक विशेषता है मानवमुखी सिंह की अखंड पाषाण में खुदी हुई प्रतिमाएँ। नगर के प्रवेश मार्ग पर दोनों ओर ये विशाल प्रतिमाएँ पाषाण में उत्कीर्णित है। अलका हुयुक में भी इस प्रकार की मनुष्यमुखी सिंह की प्रतिमाएँ है। अंकोर से युझगात को जानेवाले मार्गपर बोधाजकुई देहात है। इस पहाडियोंकी घाटी बोघाजकुई घाट से पहचानी जाती है। प्रमुख पहाडीपर जिसे बुयुक्काली नाम है, खत्ती नगर था जो इस पहाडी के ढलान पर था और घाटी की सुरक्षा की दृष्टि से महत्व रखता था। बाजू में सरीकाली और यानिज्जे काली इन छोटी पहाडीयों पर भी दुर्ग बनाये थे।[२१] खत्ती राष्ट्र के सभी प्रमुख नगरों की सुरक्षा व्यवस्था रहती थी। ये नगर प्राचीरों से सुरक्षित किये जाते थे। अर्थात उस काल के बडे नगर भी वर्तमान छोटे कस्बे के आकार के थे।

खत्ती राष्ट्र में उत्कीर्ण प्रतिमाएँ तथा अभिलेखों का प्रारंभ संभवतः इसापूर्व सोलहवी सदी में हुआ। खत्ती साम्राज्य का विस्तार अनातोलिया में सर्वदूर हो गया था। इस कारण स्थान स्थान पर कतिपय पहाडी चट्टानों के नीचले भाग पर अनेक शिल्प उत्कीर्ण किये गये। खत्ती शासन का समर्थन और उत्तेजन होने के कारण इन शिल्पों में खत्ती नरेश धर्मगुरु के रूप में देवता का अर्चन करते हुए उत्कीर्णित किये गये। खत्ती प्रासाद और मंदिरों के दीवारों पर इस प्रकार के शिल्प मिले है। याजिलीकया की दीर्घा में खत्ती नरेश तुधलीय को ईश्वर के आलिंगन में दिखाया गया है। चित्रलिपी में उसका नाम भी उत्कीर्ण है।

खत्ती साम्राज्य के पतन के बाद भी मालाती के राज्य में खत्ती कला का आविष्कार दिखाई देता है। खत्ती कला की परंपरा मालाती में और सीरिया के खत्ती राज्यों में जीवित थी।

मालाती में प्राप्त शिल्प में वायुदेव को पेय समर्पित करते हुए राजा को उत्कीर्णित किया है। वायुदेव को दो अवतारों में दिखाया है। पहली प्रतिमा में वायुदेव आर्ष रथ पर संवार है। रथ के पहिये घनगोल है और दो बैल उसे खींच रहे है। उसके आगे दूसरी प्रतिमा है जहाँ वायु देव हाथमें विद्युत् वस्त्र लेकर खडे है। राजा देवता के सामने खडा होकर नीचे रखे हुए पात्र में कमंडलू से पेय डाल रहा है। मालाती में प्राप्त हिरन के शिकार का उत्कीर्ण शिल्प कलाकारों ने बहुतही सुंदर साकार किया है। रथपर सवार शिकारी हिरन पर बाण छोड रहा है। दाहिने हाथसे कर्ण तक धनुष्य की प्रत्यंचा खीची हुई है। उसके पीछे रथ का सारथी दिखाई देता है जिस के हाथ मे घोडे का लगाम है। दौडते घोडे के नीचे शिकारी कुत्ता दौडता हुआ दिखाई देता है। बारहसिंगा (हिरन) अगले दोनों पाँव उठाकर प्राण के भय से दौडते हुई स्थिती में दिखाई देता है। उपर के भाग में चित्रलिपपि में उत्कीर्ण अभिलेख है। मालाती में ही प्राप्त एक शिल्प में सर्पासुर वध के आख्यान का प्रसंग चित्रित है। अपने दाहिने हाथ में शूल उपर उठाते हुए सर्पासुर से युद्ध करनेकी मुद्रा में वरुण देव खडे है। सामने सर्पासुर फुत्कार कर रहा है। उसके शरीर से अग्निज्वालाएँ निकल रही है। वरुण देव के पीछे और एक देवता हाथ में शूल लेकर खडा है।

खत्ती नगर के साथही अलका हुयुक, मालाती, कर्केमि आदि महत्वपूर्ण खत्ती नगर थे। अलका में अखण्ड पाषाण में बनाए मनुष्यमुखी सिंह (स्फिंक्स) तथा पाषाण पर उत्कीर्ण कतिपय शिल्प मिले है। वरुण देवता का प्रतिक था पवित्र पशु बैल। एक शिल्प में राजा अपनी रानी के साथ पवित्र वृषभ की पूजा करता हुआ दिखाई देता है। कर्केमि में प्राप्त खत्ती देवता की विशाल प्रतिमा वैशिष्ट्यपूर्ण है। उसका अधिष्ठान दो सिंहप्रतिमा से बना है। बीच में एक शक्तिमान दैवी प्राणि है जिसने दोनो सिंहों को पकडके रखा है। उपर चौरस अधिष्ठान पर देवता की आसनपर बैठी हुई प्रतिमा है।१२ नवखत्ती राज्यों में (लगभग इसापूर्व आठवी सदी) खत्ती कला जीवित थी। मालाती में नवखत्ती काल की भी शिल्पकला दिखाई देती है। सीरिया में भी खत्ती राज्य थे। उनकी

कला में असुरी कलाकारी का प्रभाव दिखाई देता है। कर्केमि, में युद्धक्षेत्र में युद्धरत राजा का एक सुंदर शिल्प मिला है। उस में रथ में खडा खत्ती शासक धनुष्य की प्रत्यंचा आकर्ण खींच कर शत्रू पर बाण छोडता हुआ दिखाई देता है। उसके बाजू में थोडा आगे सारथी दिखाई दे रहा है जो दोनो हाथों से घोडे का लगाम पकडकर रथसंचालन कर रहा है। रथ के नीचे एक शत्रु मरा हुआ पडा है। सब्जेगोझू में राजप्रासाद के अवशेष प्राप्त हुए। प्रासाद का अधिष्ठान और प्रवेशद्वार के दोनो तरफ की सिंह प्रतिमाएँ तथा दाहिने ओर का नीचे का शिल्प नवखत्ती राज्य काल का स्थापत्य प्रकट करता है।

याजिलिकया

खत्ती कला का सुंदर आविष्कार याजिलिकया में दिखाई देता है। खत्ती नगर के पास पहाडी की दो नैसर्गिक दीर्घाएँ है। चट्टानों से बनी इस दीर्घाओं पर खत्ती कलाकारोंने कुशलतासे सुंदर शिल्पपट्ट उत्कीर्ण किये है। हजारो देवताओं का एक स्थानपर एकत्रिकरण यहाँ साकार हुआ है। देवियों और देवताओं को दो पंक्तियों में चलने की मुद्रा में दिखाया गया है। ऐसा लगता है कि मानो दो यात्राएँ एक दूसरे के सम्मुख आकर मिल रहे है। देवियों की पंक्ति का नेतृत्व सिंहवाहिनी मातृशक्ति कर रही है। यह है हाथ में धर्मचिन्ह लेकर चलती हुई महादेवी खेपत (हेबत)। वह सिंह पर आरूढ है। उसके पीछे एक उसकी परशुधारी सेविका है। वह भी सिंहवाहिनी है। देवी खेपत के समान वस्त्र धारण की हुई दो देवियाँ पीछे चल रही है। वे एक द्विमुखी चील पर खडी है। देवी खेपत के दाहिनी ओर किरीटधारी पशु खडे है। देवी के सामने दो पशुओं पर खडा दाढीधारी देवता है। उसके एक हाथ में गदा और दूसरे हाथ में धर्मचिन्ह है। उसके पीछे और एक देवता है जो दो शिलाओं पर खडा है। उसके पीछे एक देवता के हाथ में धान (गेहूँ) की बाली है। दीर्घा के मुख्य भाग में यह दृश्य उत्कीर्ण है। इस के अतिरिक्त दीर्घा के अन्य स्थलोंपर सहस्रों देवियाँ एवं देवताओं की पंक्तियाँ उत्कीर्ण है।

पाश्चात्य विद्वानों ने याजिलिकया के दीर्घाओं के संदर्भ में कोई निश्चित मत प्रकट नही किया। पहले तो सभी पुरातत्ववेत्ता दीर्घाओं में उत्कीर्णित देवियाँ और देवताओं को खत्ती ही मानते थे। परंतु अब प्रायः विद्वान इन्हे हरी

देवतामंडल मानते है।१३ खत्तीशील तृतीय की हरी (हुरी) पत्नी पुदुखेपा (पदक्षेपा) के प्रभाव से हरी देवतामण्डल का समावेश खत्ती देवताओं में किया गया। पति के मृत्यु के पश्चात् महारानी पुदुखेपा तुधलिय के साथ शासन में थी। उसी काल में याजिलिकया का धार्मिक क्षेत्र बना। हरी संस्कृति भारतीय संस्कृति से प्रभावित थी इसमें कोई संदेह नही। खत्ती संस्कृति का भी अन्य किसी संस्कृति की अपेक्षा भारतीय संस्कृति से निकट का संबंध दिखाई देता है। धार्मिक एवं आध्यात्मिक स्तर पर खत्ती और हरी संस्कृति अलग नही दिखाई देती। याजिलिकया खत्ती राष्ट्र का राष्ट्रीय धार्मिक स्थल था। खत्ती नगर से उसकी दूरी केवल दो किलोमीटर की थी। मंदिरों से याजिलिकया तक जाने के मार्ग थे। इन मार्गोपर भी भवनों के अधिष्ठान दिखाई देते है। संभवतः पुराहितों के भवन एवं धर्मशालाएँ वहाँ पर थी। पर्व एवं उत्सव के प्रसंग में दूर दूर से यात्रा करके लोग वहाँ आते थे। मेले लगते थे। खत्ती राष्ट्र के अधीन राज्यों से वहाँ के राजपुत्र, धर्माधिकारी, शासकीय प्रतिनिधि, राजसेवक भी आते होंगे। प्रायः आज के पर्यटन स्थल प्राचीन कालके धार्मिक स्थान थे तीर्थस्थल थे, इसका अनुभव सभी वर्तमान राष्ट्रों में आज भी आता है।

याजिलिकया में प्रवेश करतेही सामने प्रमुख देवता और देवी है। लगभग साठ फीट चौडाई और एक सौ फीट गहराई का विशाल कक्ष ही निसर्ग ने बनाया है। हरी देवता मण्डल की पंक्तियाँ इसी कक्ष के चट्टानपर उत्कीर्ण है। इस कक्ष के मध्यभाग में एक स्वतंत्र अकेला चट्टान है जिसका छोर हरी देवता मण्डल की ओर है। इस चट्टान पर प्रमुख देवता है। जहाँ प्रमुख देवता उत्कीर्ण है उसके तल में देवता को समर्पित करने हेतु या प्रसाद चढाने हेतु वेदी बनाई गई थी इसका आभास उसके अवशेष रूप अधिष्ठान से होता है। दाहिनी ओर चट्टान में एक संकीर्ण छेद है जिससे अंदर की दूसरी दीर्घा में जाने का नैसर्गिक मार्ग है। उसके प्रवेशमार्ग पर ही कुछ चमत्कृतिपूर्ण प्रतिमाएँ उत्कीर्ण है जो रक्षक का कार्य करती हुई दिखाई देती है। अंदर की यह दीर्घा एकदम संकरी है। उसका प्रवेश कभी बाहरसे होगा जो गिरते हुए शिलाखण्डों से अवरुद्ध हुआ है। खत्ती नरेश तुधलिय को आलिंगन देते हुए देवता का प्रसिद्ध शिल्प इस दीर्घा में उत्कीर्ण है। बायी ओर खड्गदेवता (डॅगर गॉड) उत्कीर्ण है। दाहिनी ओर की दीर्घापर चलते हुए योद्धाओं की पंक्ति उत्कीर्ण है। याजिलिकया के नैसर्गिक

दीर्घाओं के पास एक कृत्रिम गुफा है और वहाँसे दीर्घा के सामने पहाडी की ढलान पर सीढियाँ और भवन के अधिष्ठान के अवशेष मिले। वहाँ मंदिर होगा जो संभवतः ख्रत्ती नगर में प्राप्त मंदिर के समान था।

साम्राज्य के पतन के बाद लगभग एक हजार वर्षों तक ख्रत्ती परम्परा सीरिया में जीवित रही। दक्षिण अनातोलिया में अनेक ख्रत्ती राज्य थे। मालाती, अलेप्पो, कर्केमि के शासक स्वयं को ख्रत्ती राजकुमार कहलाने में गौरव का अनुभव करते थे। असुरियन अभिलेखों में सीरिया का उल्लेख 'ख्रत्ती देश' के नाम से किया गया है। सीरिया में ख्रत्ती साम्राज्य की स्मृति दीर्घ काल तक रही। बायबल में इसी कारण ख्रत्ती नाम आते है। इन नव ख्रत्ती शासकों के कतिपय अभिलेख चित्रलिपि में उपलब्ध है। परंतु अभी तक वे पढे नही गये है। नव ख्रत्ती राज्यों के राजनैतिक इतिहास की रचना नही हुई है। चौथी सदी तक सीरिया, अनातोलिया यहाँ पर अंशतः क्यूं ना हो उनके प्राचीन संस्कृति की परम्परा थी। मंदिर थे। देवी देवताओं की पूजा उत्सव चलते थे। फिर ईसाई धर्मगुरूओंने योजनाबद्ध तरिकेसे मूर्तिपूजा का विरोध किया। मंदिर नष्ट करके गिरिजाघर निर्माण किये गये। हिंसा, अत्याचार के माध्यम से इसाईकरण हुआ। सारे ऐतिहासिक साधन भी नष्ट हुए। सातवी सदी में अरबस्तान में इस्लाम का उदय हुआ। इस्लाम के क्रूर बर्बर आक्रमणोंने मिश्र (इजिप्त), अनातोलिया (तुर्कस्थान), मेसोपोटामिया (इराक), इरान यहाँ की संस्कृति पर सर्वनाश की मोहर लगायी। सभी मुस्लीम देश बनाए गये। जो कुछ भी बचा केवल मिट्टी के नीचे दब जाने के कारण बचा। जब पुरातत्वविदों के उपकरणों का स्पर्श हुआ तब ये पुरातात्विक अवशेष बोलने लगे। ख्रत्ती राष्ट्र की कहानी सुनाने लगे।

संदर्भ

१. तुधलीय के पश्चात पू शर्ऱुम राजा बना। उसने उसके जामात लबर्न को अपना वारिस घोषित किया। पू शर्ऱुम के पुत्र पापादिल्म ने विद्रोह किया। लबर्न के पुत्रों में भी सत्ता के लिये संघर्ष हुए। ख्रत्तीशील को उसका लाभ मिला। ख्रत्तीशील के पश्चात मुर्शिली राज्य पर आया। मुर्शिली का पुत्र ख्रंतिली था। ख्रंतिली पिता की हत्या करके ही राज्यपर आया। ख्रंतिली के पश्चात् तो अराजक फैल गया था। यह सब देख्रकर ही तेनिपिलू ने वारस चुनने की घटना बनाई।

२. महान् राजा या महाराजा इस अर्थ से सभी ख्रत्ती नरेश स्वयं को तबर्न कहलाते थे। सभी राजाओं की मुद्राओं पर 'तबर्न' उपाधि अंकित है।

३. ख्रत्तीशील मुवतल्ली के साथ सीरिया के अभियानपर गया था। कादेश के युद्धके पश्चात वह लौटते समय लवजातियां में ठहरा। उसने शौश्गा देवी की पूजा की। वहाँ के धर्मगुरू पेंतिप शर्री की कन्या पदक्षेपा से विवाह किया। ख्रत्तीशील राजा बनने के बाद अपने कर्तृत्व से पदक्षेपा ने उसे शासन में सहयोग दिया। आंतरराष्ट्रीय व्यवहार में भी उसका सहयोग रहा। ख्रत्ती और मिश्र के बीच जो संधिपत्रक बना उस समय की मुद्रापर पदक्षेपा अरिन्ना देवी के आलिगन में दिख्राई गयी है।

४. चार हजार वर्ष पूर्व पश्चिम एशिया में रथों का उपयोग प्रारंभ हुआ। सुमेरी दो और चार पहियेवाले रथों का उपयोग करते थे। उनके रथ भारी थे। बैल ख्रच्चर या अन्य पशुओं से ख्रींचे जाते थे। उनकी गति सीमित रहती थी। बाबिलोक और असुरी सेना में या मिश्री सेना में भी अश्वरथ नही थे। परंतु ख्रत्ती, मितान्ति, वृज्जि जितने भी भारतीय संस्कृति से प्रभावित राज्य थे उनकी सेना में तीलीयुक्त पहिये के गतिमान अश्वरथ थे। अश्वविद्या भारत से ही पश्चिम एशिया में फैली। मितान्नि लेख्रक किक्कुलि द्वारा अश्वरथ पर लिख्रा हुआ ग्रंथा ख्रत्ती और मितानि राज्यों में पढाया जाता था।

५. चांदी का चलन पश्चिम एशिया में सब जगह पर था। ६० शेकेल का एक मिना होता था। बाबिलोन में ८.४ ग्राम चांदी का एक शेकेल था। ख्रत्ती राष्ट्र में वह पाँच ग्राम का था। चांदी के छडे या छव्हे होते थे। (गुर्ने, द हित्तीज, लंडन १९५२ पृ. ८०-८७)

६. ऐसा लगता है कि लोहा गलाने की समस्या थी। ख्रत्ती कारागिर कुशल थे। लोहा गुलाने की प्रक्रिया वे जानते थे। ख्रत्तीशील तृतीय ने लिखे हुए एक पत्र में इसका संकेत मिलता है। उसमें कहा है 'आपने अच्छे लोहे की माँग की थी। परंतु किझुवत्न की हमारे वरवार में अभी वह उपलब्ध नहीं है। यह लोहा गलाने का मोसम नही है। जब लोहा तैयार होगा आपको अवश्य भेज दूँगा। अभी मैं आपको एक ख्रंजर का लोहे का फल भेज रहा हूँ।'

संभवतः समकालीन असुर नरेश को ख्रत्तीशील ने लिख्रा हुआ यह पत्र था। - गुर्ने ८३

७. डॉ. ठाकूर प्रसाद वर्मा जी ने मूल अभिलेख्रीय उल्लेख का संस्कृत रूपांतर किया है। इसमें 'अश्शिश्ल' यह शब्द अस्मद् तथा इलः इन दो शब्दों के संयोग से बना है। दूसरा 'अन' शब्द जो नासत्य के साथ आया है वह द्विवचन को निर्देशित करता है। 'इल' देवता वाचक है। अश्शिश्ल याने अस्मद् श्लः याने हमारे देवता।

८. डेव्हिड डिरिंजर-द अल्फाबेट-लंडन-री प्रिंट १९५३ पृ.-९५

९. डेव्हिड डिरिंजर - पृ.९७

१०. ब्रॉझ की प्रतिमा बर्लिन के म्युझिअम में है। सुवर्ण प्रतिमा ब्रिटीश म्युझिअम में है।

११. हॉल एच.आर.

१२. इस शिल्प का केवल अधिष्ठान अंकारा म्युझिअम में है। वुली ने कर्केमि में यह प्रतिमा देखी और उसका फोटो खींचा। उत्खनन के समय यह प्रतिमा टूटी हुई थी। उस समय के फोटोग्राफ के कारण ही कल्पना कर सकते है कि देवता के सरपर सिंगवाला मुकुट था और हाथों में गदा एवं परशु था। (सेटन लॉइड अर्ली अनातोलिया लंडन १९३६ पृ. १६८)

१३. १९५२ में इ लारोके ने अपना निष्कर्ष दिया कि ये देवी देवता खत्ती नही है। उस पर के चित्रलिपि में उत्कीर्ण नाम, अन्य स्थानपर प्राप्त अलग अलग पंथ संप्रदाय की प्रतिमाएँ, खत्ती देवतामण्डल का प्राप्त वर्णन इस आधारपर उसने बीस देवताओं की प्रतिमाएँ पहचानकर सिद्ध किया कि उत्कीर्ण प्रतिमाएँ हरी देवताओं की है।

१४. आसितवद जिस के अधीन था वह सिलिशिया नरेशे अवदिकस असुर नरेश लिग्लथपिलेसर के समकालीन था। इसापूर्व ७३८ के असुर लेख में उसका उल्लेख आता है।

१५. लॉइड सेटन–पृ. १३०

१६. श्मित एरिक–अनातोलिया थ्रू द एजेस–पृ.६९.

१७. यह राजा की प्रतिमा अब अंकारा में पुरातत्व संग्रहालय के प्रवेशद्वार के पास रखी है।

१८. अक्षुर नरेश तिग्लथ पिळेसर ने इसापूर्व ११२० में आक्रमण किया तब खत्ती राज्यों के संघ का नेतृत्व मिलिद (मालत्या) राज्य ने किया था।

१९. मितान्नि एवं हरी (हुरियन) देवता, धार्मिक प्रथाएँ, एवं भाषा पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव था। मितन्नि और खत्ती इन के बीच अर्थात मितन्नि नरेश मत्तिवज और खत्ती नरेश सुप्पिल्युलिम में जब संधिपत्र बना उस में वैदिक देवताओं की शपथ ली है। मित्र, वरूण, इन्द्र तथा नासत्य इन देवताओं को साक्षी के रूप में प्रस्तुत किया है।